ऋषि प्रसाद

वर्ष : ६
अंक : ४१
९ मई १९९६

सम्पादक : के. आर. पटेल

मूल्य : रू. ६-००

सदस्यता शुल्क

भारत, नेपाल व भूटान में
(१) वार्षिक : रू. 50/-
(२) आजीवन : रू. 500/-

विदेशों में
(१) वार्षिक : US $ 30
(२) आजीवन : US $ 300

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अहमदाबाद-३८० ००५
फोन : (०७९) ७४८६३१०, ७४८६७०२.

प्रकाशक और मुद्रक : के. आर. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा,
साबरमती, अहमदाबाद-३८० ००५ ने
विनय प्रिन्टिंग प्रेस, मीठाखली, अहमदाबाद में छपाकर
प्रकाशित किया ।

इस अंक में...

भूल सुधार : अंक : ३९ (मार्च १९९६) के 'शरीर स्वास्थ्य' स्तंभ में 'विविध रोगों में आभूषण चिकित्सा' लेख में अंतिम वाक्य (पृष्ठ २८ पर) सुधारकर कृपया इस प्रकार पढ़ें : ''शुक्राचार्य के अनुसार पुत्र की कामनावाली स्त्रियों को हीरा नहीं पहनना चाहिए ।''

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें ।

सत्संग से असंगता आती है

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

असंगता क्या है ?

देखती आँख है लेकिन उसके साथ संग कर लिया कि 'मैं देखता हूँ ।' सुनते कान हैं और संग हो गया कि 'मैं सुनता हूँ ।' चखती जीभ है और संग हो गया कि 'मैं चखता हूँ ।' सूँघता नाक है लेकिन कहते हैं कि 'मैंने सूँघा ।' सोचता मन है और आप कहते हैं 'मैं सोच रहा हूँ ।' निर्णय करती है बुद्धि और आप कहते हैं कि 'मेरा निर्णय है ।'

आप क्या हैं ? आप तो एक, अद्वैत, अखण्ड, चैतन्य, आत्मा हैं लेकिन महाराज ! आप टुकड़े-टुकड़े होकर बँट गये ।

सत्संग से आपको पता चलेगा कि ये देखनेवाली, सुननेवाली, चखनेवाली, सूँघनेवाली इन्द्रियाँ हैं ।

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः ।
अहंकारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते ॥

प्रकृति में ये गुण और कर्म सब हो रहे हैं । अहंकार से विमूढ़ होकर जीव अपने को कर्त्ता मानता है । इसीसे कर्मों के फल के अनुसार संसार में भटकना पड़ता है । मगर जो परमात्मा को कर्त्ता मानता है और अपने को केवल निमित्त होने देता है, वह कर्म करते हुए भी अलिप्त हो जाता है, असंग हो जाता है । करते हुए भी अकर्त्ता पद में उसको विश्रांति मिल जाती है ।

सत्संग से असंगत्व आता है और वासना का त्याग होता है । वासना दो प्रकार की है : एक मलिन वासना और दूसरी शुद्ध वासना । मलिन वासना करोड़ों जन्मों के संस्कार हैं । आप कभी भी निराश, हताश न होना । अपने दोष या अवगुण देखकर ऐसी गाँठ मत बाँध लेना कि, 'भाई ! अपना काम नहीं है भगवान के रास्ते चलना... ! अपना काम नहीं है ईश्वर का दर्शन करना । अपने में तो लोभ है, क्रोध है, यह है, वह है ।'

मेरे भैया ! करोड़ों जन्मों के जो संस्कार हैं, करोड़ों जन्मों की जो मैली चादर है, वह धोते-धोते साफ होगी । रंग लगते-लगते लगेगा, लेकिन आप सोचें कि 'नहीं होगा... नहीं होगा...' तो यह सोचकर आप उसको और मैली कर देते हैं ।

बुद्धि की मंदता, विषयों में आसक्ति, दुराग्रह, अपने सिद्धांत में पकड़, यह सब करोड़ों जन्मों की आदत है । अतः ईश्वर के सिद्धांत में अपने सिद्धांत को मिलाने के लिये जल्दी से मन तैयार नहीं होगा । संतों के अनुभव में अपना अनुभव मिलाने के लिए मन जल्दी तैयार नहीं होगा ।

जो परमात्मा को कर्त्ता मानता है और अपने को केवल निमित्त होने देता है, वह कर्म करते हुए भी अलिप्त हो जाता है, असंग हो जाता है ।

फिर भी आप चिंता न करें । अभ्यास करते-करते ऐसा दिन आ जाएगा कि आपको यह कार्य सरल हो जायगा । जो काम आपको कठिन लग रहा है वह अभ्यास के बल से सरल हो जायेगा । आत्म-साक्षात्कार करना, प्रभु का दीदार करना, जन्म-मरण से पार हो जाना, सदैव आनन्दस्वरूप ईश्वर के साथ एकाकार रहना अभी कठिन लग रहा है मगर प्रतिदिन दृढ़ता से शुद्ध आचरणपूर्वक **'शिवोऽहम्... शिवोऽहम्...'** करते करते आप शिवस्वरूप हो जायेंगे ।

जीवन में सत्संग का अभ्यास होना चाहिए, मलिन वासना का त्याग करने के लिये तत्परता होनी चाहिए । तुच्छ वासना, दुष्ट वासना को त्यागने से तुम्हारा सामर्थ्य बढ़ेगा ।

स्वात्मज्ञानं विचारणम् ।

अपनी आत्मा के ज्ञान का विचार... इससे आप की अंदर की शक्तियों का विकास हो जायेगा । बिना आत्मविचार के त्याग और वैराग्य नहीं टिकते । ज्यों-ज्यों आप विचारते जायेंगे, त्यों-त्यों संसार की नश्वरता और परमात्मा की शाश्वतता का अनुभव होगा । पिछले जन्म के माता, पिता, पत्नी, बन्धु, मकान, वैभव जो कुछ भी था वह अभी नहीं है । लेकिन पिछले जन्म में जो परमात्मा तुम्हारे साथ थे वे अभी भी हैं । इस जन्म के मित्र, कुटुंबी, बन्धु मृत्यु का झटका लगते ही पराये हो जायेंगे, लेकिन परमात्मा पराया नहीं होगा । इस प्रकार, जो पहले तुम्हारा था, अब भी तुम्हारा है और मरने के बाद भी जो तुम्हारा साथ नहीं छोड़ता उस आत्मा के ज्ञान को बढ़ाते जाओ ।

शरीर की नश्वरता का बार-बार विचार करो । आत्मा की शाश्वतता का बार-बार खयाल करो ।

यह देह दु:खालय है । नाक तो तोते की चोंच जैसा लग रहा है मगर ऊपर करके देखो तो ? दाँत तो अनार के दाने जैसे हैं मगर सुबह में देखो तो ? मरे हुए बेक्टेरियों की बदबू आ रही है । इस देह में अगर कोई रस, कोई सार, कोई स्वाद नजर आता है तो वह उस परमात्मा का है । परमात्मा का सम्बन्ध इससे टूट जाय तो फिर इसकी कोई कीमत नहीं । इसको उठाने के लिये लोग चाहिये और जलाने के लिये रूपये चाहिये । मगर जब तक चैतन्य से संबंध बनाये रखने की क्षमता है, तब तक यह शरीर चाहे किसीका भी हो, अपनी-अपनी जगह पर ठीक है । चैतन्य से संबंध कट जाने पर चाहे कितने ही बड़े सुखी घर में पला हो या गरीब घर में पला हो, इस शरीर की कोई कीमत नहीं । इसका मूल्य तब तक है जब तक वह परमात्मा का सान्निध्य बनाये हुए है । परमात्मा की सत्ता-स्फूर्ति लेने की योग्यता नष्ट होते ही यह शरीर दूसरों के लिये बोझा बन जाता है ।

प्राणों का जय करने से मनोजय होता है । कोई जितना प्राणों को रोकता है, प्राणों के नियमन की विधि को जानता है उतना वह वक्त के अनुसार चलकर जीवन-संग्राम में बाजी मार लेता है ।

शरीर की नश्वरता का बार-बार विचार करो । आत्मा की शाश्वतता का बार-बार ख्याल करो ।

चित्तजय का पहला उपाय है सत्संग, दूसरा उपाय है वासनात्याग, तीसरा उपाय है आत्मज्ञान का विचार और चौथा उपाय है प्राणों के स्पन्दन का निरोध करना ।

प्राणस्पन्दनिरोधश्च ।

हमारी दस इन्द्रियाँ हैं । उसका स्वामी मन है और मन का स्वामी प्राण है । प्राणायाम में बड़ी शक्ति है । प्रतिदिन अगर नियमित रूप से थोड़े प्राणायाम किये जायें तो अस्थमा का रोग नहीं होगा ।

प्राणों का जय करने से मनोजय होता है । जो जितना प्राणों को रोकता है, प्राणों के नियमन की विधि को जानता है, उतना वह वक्त के अनुसार चलकर जीवनसंग्राम में बाजी मार लेता है ।

अरब का सम्राट था नौशेखाँ । अपनी न्यायकारिता में वह प्रसिद्ध था । एक बार भोजन के बारे में न्याय देना था । कौन-सा व्यंजन बढ़िया है उसका निर्णय करना था । वह अपने शाही महल में मित्रों के बीच बैठा था । महल के चतुर रसोइयों ने अलग-अलग व्यंजन बनाये थे । कौन-से रसोइये का कौन-सा व्यंजन बढ़िया है यह निर्णय करना था ।

बादशाह के खास सेवक ने पूरी, खीर, मालपुए, रायते आदि न जाने क्या-क्या परोसा । परोसते-परोसते वह नौकर कटोरी में जब दाल परोस रहा था तब दाल के थोड़े-से छींटे बादशाह के श्वेत वस्त्रों को लगे । बादशाह गुस्से से भर गया । वह जमाना था कि बादशाह को जरा-सा नाराज करना माने प्राणदंड सिर मोल लेना ।

सेवक समझ गया । उसके तो हाथ-पैर काँपने लगे । बादशाह की आँखें मानो आग बरसा रही हैं । अब जाये कहाँ ? मगर वह सेवक प्राणायाम करता था। थोड़ा-बहुत ध्यान-भजन करता था। समयसूचकता, बुद्धिमत्ता काम लग गई । जिसका प्राण शुद्ध है, उसका मन भी थोड़ा शुद्ध होता है । मन शुद्ध होता है तो किस समय क्या करना चाहिए, उसकी युक्ति अंदर से ही उसको आ जाती है ।

उस सेवक ने भय को, कंपन को भगा दिया । मरता क्या नहीं करता ? बादशाह बहुत-बहुत तो क्या करेंगे ? प्राणदंड देंगे । जब मर ही जाना है तो कुछ आखिरी युक्ति तो लगाऊँ ! वह सेवक दाल का पूरा पात्र बादशाह के कपड़ों पर उड़ेलने लगा । बादशाह का गुस्सा तो और बढ़ गया । फिर सोचा कि सेवक बड़ा इत्मीनान से दाल उड़ेलता जा रहा है और कोई भय भी नहीं है, चेहरे पर कोई ग्लानि भी नहीं है ! बादशाह नौशेखाँ का क्रोध आश्चर्य में बदल गया । वह बोला : "यह क्या करता है ?"

सेवक समझ गया । उसके तो हाथ-पैर काँपने लगे । बादशाह की आँखें मानो आग बरसा रही हैं । अब जाये कहाँ ?

नौकर विनय से बोला : "अन्नदाता ! जहाँपनाह ! देश-परदेश में आप न्यायकारिता के लिये प्रसिद्ध हैं । अब इस दास से गलती हो गई और दाल की कुछ बूँद आपके कपड़ों पर गिर गईं । आप मुझे प्राणदंड तो देने ही वाले थे । लोग सुनेंगे कि नौकर की, गुलाम की थोड़ी-सी गलती के कारण इस न्यायप्रिय बादशाह ने अपने प्यारे पुराने नौकर को प्राणदंड दे दिया तो वे क्या सोचेंगे ? मेरे मालिक की बेईज्जती न हो इसलिये मैंने पूरी दाल आपके कपड़ों पर उड़ेल दी ताकि मुझे प्राणदंड देने के लिए आपको पर्याप्त कारण मिल जाय ।" बादशाह उसकी बुद्धिमत्ता पर खुश हो गया । उसकी भावना देखकर उसे गले लगा लिया और बोला : "तेरा गुनाह माफ है ।"

जिसने अपने प्राणों को जीत लिया है वह बादशाह के प्राणों को भी जैसा चाहे वैसा नचा सकता है ।

(पृष्ठ २७ का शेष)

करना चाहिये जिसमें सुबह-सुबह खाली पेट सवा लिटर पानी पीना होता है। इससे ब्लडप्रेशर, डायाबिटीज, दमा, टी.बी. जैसी भंयकर बीमारियाँ भी नष्ट हो जाती हैं । यह प्रयोग न करते हों तो शुरू करें और लाभ उठायें । घर से बाहर निकलते समय एक गिलास पानी पीकर ही निकलना चाहिये । उससे लू लगने की संभावना नहीं रहेगी । बाहर के गर्मी भरे वातावरण में से आकर तुरन्त पानी नहीं पीना चाहिये, १०-१५ मिनट बाद ही पानी पीना चाहिये । इस ऋतु में रात को जल्दी सोकर प्रात: जल्दी जगना चाहिये । रात को जगना पड़े तो एक-एक घण्टे से ठण्डा पानी पीते रहना चाहिये । इससे उदर में पित्त और कफ का प्रकोप नहीं रहता ।

पथ्य विहार : प्रात: सूर्योदय से पहले ही जगें । शीतल जलाशय के पास घूमें । शीतल पवन जहाँ आता हो वहाँ सोयें । जहाँ तक संभव हो सीधी धूप से बचना चाहिये । सिर और आँखों को सूर्य की किरणों से बचाना चाहिए । सिर में चमेली, बादाम रोगन, नारियल, लौकी का तेल लगाना चाहिये ।

अपथ्य आहार : तीखे, खट्टे, कसैले एवं कड़ुवे रसवाले पदार्थ इस ऋतु में नहीं खाने चाहिये, जैसे नमकीन, तेज मिर्चमसालेदार तथा तले हुए पदार्थ, बासी दही, अमचूर, आचार, सिरका, इमली आदि नहीं खायें । शराब पीना ऐसे तो हानिकारक है ही लेकिन इस ऋतु में विशेष हानिकारक है । फ्रीज का पानी पीने से दाँतों व मसूढ़ों में कमजोरी, गले में विकार, टांसिल्स में शोथ, शर्दी-जुकाम आदि व्याधियाँ होती हैं इसलिये फ्रीज का पानी न पियें । मिट्टी के मटके का पानी पियें ।

अपथ्य विहार : रात को देर तक जागना और सुबह देर तक सोये रहना त्याग दें । अधिक व्यायाम, स्त्रीसहवास, उपवास, अधिक परिश्रम, दिन में सोना, भूख-प्यास सहना वर्जित है ।

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है :

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः ।
यस्मिन्स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते ॥

'जिस लाभ की प्राप्ति होने पर उससे अधिक कोई दूसरा लाभ नहीं माना जाता और जिसमें स्थित होने पर वह योगी बड़े भारी दुःख से भी विचलित नहीं होता, वह आत्मलाभ है ।'

(श्रीमद्भगवद्गीता : ६.२२)

मनुष्य सदैव छोटे लाभ को छोड़कर बड़े लाभ को पाने की चेष्टा करता है । जैसे- किसीको नौकरी में ३००० रूपये वेतन मिलता हो और उसको अन्यत्र कहीं से वर्त्तमान वेतन से अधिक वेतन मिलने का आमंत्रण आता है तो वह व्यक्ति निश्चित ही ज्यादा वेतनवाली नौकरी से आकर्षित होगा । इस प्रकार एक लाभ से यदि व्यक्ति को दूसरा कोई बड़ा लाभ मिलता है तो वह उस छोटे लाभ से विचलित हो जाता है ।

रात को हमें नींद में तमःप्रधान सुख मिलता है लेकिन सुबह उस सुख का भी त्याग करके हम विषयों के सुख की ओर लपकते हैं और जब विषयों के सुख से भी ऊब जाते हैं तो मंदिरों में, संत-महापुरुषों के सत्संग-प्रवचन व कीर्तन आदि में जाते हैं जहाँ विषय-विकारों के सुख से ऊँचा सुख, सात्त्विक सुख मिलता है । अतः जहाँ से यह लाभ आता है उस तत्त्व को समझकर आप वहाँ यदि टिक जायें तो फिर आपका मन चलित नहीं होगा, बड़ा लाभ पाने की आप कोशिश नहीं करेंगे क्योंकि सभी लाभों में परम लाभ है ब्रह्मज्ञान ।

जिनको परम लाभ हुआ है वे समझते हैं कि दुःख और पीड़ा इस शरीर को होती है । शरीर में दिखते हुए भी वे अपने-आपमें, परब्रह्म परमात्मा में रहते हैं इसलिए वे चलित नहीं होते हैं । शरीर का या मन का दुःख जहाँ नहीं पहुँचता, वही निर्दुःख, अकाल पुरुष आत्मा है ।

नाम जीहँ जपि जागहिं जोगी ।
बिरति बिरंचि प्रपंच बियोगी ॥
ब्रह्मसुखहि अनुभवहिं अनूपा ।
अकथ अनामय नाम न रूपा ॥

(श्रीरामचरित० बालकाण्ड : २१,१)

वह अनुपम सुख है । गुरुवाणी ने भी कहा :

मत करो वर्णन हर बेअन्त है,
क्या जाने वो कैसो रे...

सारी पृथ्वी का राज्य अगर एक आदमी को मिल जाये, शरीर तंदुरुस्त हो, मधुरभाषिणी सुन्दर पत्नी हो, आज्ञाकारी पुत्र हों- यह मानवीय सुख की पराकाष्ठा है । इससे सौगुना सुख गंधर्वों के पास होता है । गंधर्वों के पास ऐसे यान होते हैं जो पृथ्वी पर भी आ सकते हैं और गुरुत्वाकर्षण के पार भी जा सकते हैं । गंधर्व चाहें तो दिखें और न चाहें तो वे और उनके यान न भी दिखें- ऐसा उनके पास सामर्थ्य होता है ।

जिनको परम लाभ हुआ है वे समझते हैं कि दुःख और पीड़ा इस शरीर को होती है । शरीर में दिखते हुए भी वे अपने-आपमें, परब्रह्म परमात्मा में रहते हैं इसलिए वे चलित नहीं होते हैं ।

मेरे एक मित्रसंत हैं लालजी महाराज । वे जब तपस्या कर रहे थे तब उनके पास रात्रि के दो बजे पाँच गंधर्व आये । लालजी महाराज उस समय जप कर रहे थे । गंधर्वों की काया कालीकलूट थी और आकार बड़ा था । उन्हें देखकर लालजी महाराज घबराये और आँख बंद करके 'राम...राम...राम...राम...' करने लगे । आधे घण्टे बाद जब लालजी महाराज ने

आँखें खोलीं तो क्या देखते हैं कि पाँचों के पाँच गंधर्व जो पहले बड़े भयंकर दिख रहे थे वे ही अब मुकुट, कुण्डल एवं पीताम्बर से युक्त दिखे जो एक-एक करके दीवार में अलोप होने लगे। जब पाँचवाँ गंधर्व आधा अलोप हुआ तो मुस्कुराता हुआ बोला :

''घबराना नहीं। हम गंधर्व हैं। हम परीक्षा लेने आये थे।''

इस युग में भी ऐसे गंधर्व दिखते हैं। आप '**ॐ नमो भगवते वासुदेवाय**' मंत्र को सात दिन तक लगातार जपें तो आपको आकाशचारी देवताओं, यक्षों, गंधर्वों आदि के चमत्कारिक दर्शन हो सकते हैं। अहमदाबाद, सूरत और इन्दौर के आश्रम में ध्यानयोग शिविर लगते हैं। उसमें साधक सम्मिलित होते हैं और उनकी सोई हुई कुण्डलिनी शक्ति जब जागृत होती है तो उनको ऐसे-ऐसे चमत्कारिक अनुभव होते हैं जिनकी वे स्वप्न में भी कल्पना नहीं कर सकते हैं। ज्ञानेश्वरी गीता के छठे अध्याय के दसवें-ग्यारहवें श्लोक में इस कुण्डलिनी योग की बड़ी भारी महिमा का वर्णन किया गया है।

उनके पास रात्रि के दो बजे पाँच गंधर्व आये। गंधर्वों की काया कालीकलूट थी और आकार बड़ा था। पाँचवाँ गंधर्व मुस्कुराता हुआ बोला : ''घबराना नहीं। हम गंधर्व हैं। हम परीक्षा लेने आये थे।''

जब साधक की सोई हुई कुण्डलिनी शक्ति जागती है तब मूलाधार केन्द्र से उठी हुई वह शक्ति पहले तो शरीर की नाड़ियों को शुद्ध करने के लिए गति करती है, क्रियाएँ होती हैं। जहाँ-जहाँ तुम्हारे रोग के कीटाणु हैं अथवा रोग होने की संभावना है वहाँ-वहाँ वह आसन और प्राणायाम के द्वारा तुम्हारी नाड़ियों का शोधन करती है। फिर साधक कभी हँसता है, कभी रोता है, कभी उसे रोमांच होता है तो कभी अश्रुधारा बहती है। कभी-कभी वह सूक्ष्म शरीर से लोक-लोकान्तर की यात्रा भी कर आता है। इस प्रकार के अनेक रहस्यमय अनुभव साधक को होते हैं।

आश्रम में ध्यानयोग शिविर लगते हैं। उसमें साधक सम्मिलित होते हैं और उनकी सोई हुई कुण्डलिनी शक्ति जब जागृत होती है तो उनको ऐसे-ऐसे चमत्कारिक अनुभव होते हैं जिनकी वे स्वप्न में भी कल्पना नहीं कर सकते हैं।

मैंने एक सच्चे संत की कथा में एक बात सुनी थी। उन्होंने कहा था : ''अगर योगी, ब्रह्मज्ञानी संत चाहे तो अपने ब्रह्मसुख की झलक एक मिनट के अंदर हजारों आदमियों को एक साथ करा सकता है।'' उस वक्त तो मैंने ध्यान नहीं दिया लेकिन जब मैं घर छोड़कर एकान्त में तपस्या के लिए गया तब मुझे यह बात याद आई और मेरे मन में प्रश्न उठा : 'यह कैसे हो सकता है ? अगर हजार आदमी को वह अपना अनुभव चखाने के लिए सूक्ष्म शरीर से जाये-आये... जाये-आये... । मान लो आधा मिनट जाने-आने में लगे फिर भी हजार व्यक्तियों के लिए पाँचसौ मिनट तो चाहिए और उन महापुरुष ने तो एक मिनट में हजारों को अनुभव कराने की बात कही है।' मेरे मन में तीव्र जिज्ञासा उठी और खोजते-खोजते एक ऐसे योगी पुरुष के सान्निध्य का लाभ मुझे मिला जिन्होंने मुझे शक्तिपात-दीक्षा देकर उस ब्रह्ममस्ती में सराबोर कर दिया। तदुपरांत मैं चालीस दिन के लिए एक कमरे में बंद हो गया। भूख लगने पर थोड़ा-सा दूध लेता था। बाकी समय में उसी प्रयोग को सार्थक करने में लगा रहता। उन दिनों में मैंने पूर्णत: मौन रखा। चालीस दिन यह प्रयोग पूरा करके जब मैं बाहर आया तो सामने जो थोड़े-बहुत लोग बैठे थे उन पर मैंने दृष्टिमात्र से यह प्रयोग किया। फिर धीरे-धीरे पचास-सौ पर और अब तो हजारों-हजारों पर एक साथ यह प्रयोग होता है जिससे कइयों को शांति, आनंद एवं माधुर्य की प्राप्ति

होती है ।

मानुषी सुख से सौगुना सुख गंधर्वों के पास है । गंधर्वों से भी सौगुना सुख देवताओं के पास होता है । देवता दो प्रकार के होते हैं : एक होते हैं कर्मज देवता- जो यज्ञ-याग, तप, व्रत आदि करके मृत्यु के पश्चात् देवलोक में जाते हैं। दूसरे होते हैं आजानु देव- जो कल्प के आरंभ में हुए और कल्प के अंत तक देवलोक में रहेंगे ।

गंधर्वों से सौगुना सुख कर्मज देवताओं के पास और उनसे भी सौगुना सुख आजानु देवताओं के पास होता है । आजानु देवताओं से भी सौगुना सुख इन्द्र के पास होता है । जैसे- सामान्य नागरिक से कई गुनी सुविधा राष्ट्रपति के पास होती है । ऐसे ही देवताओं से सौगुना सुख देवताओं के राजा इन्द्र को होता है और इन्द्र से भी कई गुनी ज्यादा सुविधा इन्द्र के गुरुदेव बृहस्पति के पास है। ऐसे देवगुरु बृहस्पति का पुत्र कच अपने पिता से पूछता है :

''पिताजी ! वास्तविक तत्त्व की प्राप्ति कैसे हो ?''

तब देवगुरु बृहस्पति कहते हैं : ''कच ! यहाँ तो सब भोग उपलब्ध हैं अतः तुम मृत्युलोक में जाकर थोड़ा तप करो ।''

पिता की आज्ञा को शिरोधार्य करके कच यहाँ मनुष्य लोक में, गिरि-गुफाओं में आकर ध्यानादि करने लगा। ऐसा करते-करते तीन वर्ष व्यतीत होने पर देवगुरु बृहस्पति उसके पास आये । कच ने गुरु की तरह उनकी पूजा की और बोला :

''पिताजी ! तीन वर्ष हो गये तप करते-करते लेकिन अभी तक ब्रह्मज्ञान के अमृत का अनुभव नहीं हो रहा है जो सब सुखों से उत्तम सात्त्विक सुख प्रदान करनेवाला है ।''

बृहस्पति : ''वत्स ! अभी और तप करो ।''

चार साल और बीतने पर पुनः बृहस्पति आये । कच ने उनको गुरु की तरह नवाजा तथा विनयपूर्वक कहा :

''गुरुदेव ! अभी तक उस ब्रह्मज्ञान के अमृत का अनुभव नहीं हुआ ।''

तब बृहस्पति बोले : ''पुत्र ! सर्वस्व का त्याग करो ।'' कच सोचने लगा : मैंने स्वर्ग का वैभव छोड़ा । देखकर, सुनकर, सूँघकर, चखकर, स्पर्श करके जो सुख मिलता है वह प्राकृतिक सुख है, लेकिन उस ब्रह्म-परमात्मा के सुख की प्राप्ति के लिए मैंने इन्द्र से भी कई गुना ज्यादा प्राप्त सुख को भी छोड़ा, नश्वर सुख की लालसा भी छोड़ी ।'

बृहस्पति : ''पुत्र ! और भी त्याग कर ।''

कच विचारने लगा : 'और क्या त्यागूँ ? अब तो मेरे पास यह शरीर ही है । क्या इसका भी त्याग कर दूँ ? तब ब्रह्मज्ञान प्रगट होगा ?'

बृहस्पति : '' नहीं नहीं । जिसमें सर्वस्व रहता है, उसका त्याग कर और सर्वस्व रहता है 'अहं' में... 'मैं' में । उस 'मैं' को परब्रह्म परमात्मा में विलय कर। बेटा ! इस परिच्छिन्न अहं को छोड़ तो वास्तविक 'मैं' प्रगट होगा । देह के 'मैं' का त्याग कर, वत्स ! तो तेरा मूल स्वरूप, वह ब्रह्मसुख, वास्तविक सुख प्रगट हो जायेगा। मनुष्य अपने उस मूल स्वरूप को नहीं पहचानता है इसलिए वह परम सुख से वंचित् रह जाता है । वत्स ! तू अपने ब्रह्मस्वरूप को, अपने आत्मदेव को जान ले तो परम सुखी होगा, वास्तविक अमृत को प्राप्त कर लेगा ।''

देवगुरु बृहस्पति के उपदेश को सुनकर कच ने

''अगर योगी, ब्रह्मज्ञानी संत चाहे तो अपने ब्रह्मसुख की झलक एक मिनट के अंदर हजारों आदमियों को एक साथ करा सकता है ।''

मेरे मन में तीव्र जिज्ञासा उठी और खोजते-खोजते एक ऐसे योगी पुरुष के सान्निध्य का लाभ मुझे मिला जिन्होंने मुझे शक्तिपात-दीक्षा देकर उस ब्रह्ममस्ती में सराबोर कर दिया ।

ठीक से भीतर गोता मारा और उस अन्तरतम में छुपे हुए अपने 'मैं' को सूक्ष्म, सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम करते-करते उस परब्रह्म परमात्मा में विलय कर उस परमात्मस्वरूप का साक्षात्कार कर लिया, वास्तविक अमृत को प्राप्त कर लिया... उस सुख को प्राप्त कर लिया जिसे पाने के बाद फिर किसी सुख की अभिलाषा ही नहीं रह जाती है ।

आप भी खोज लें किन्हीं ऐसे सद्गुरु को और उनके वचनों व उपदेशानुसार लग पड़ें हृदय में छुपे हुऐ उस परमात्मतत्त्व की खोज में... तो वह दिन दूर नहीं जब आप भी उस अमृत का, उस परमात्मसुख का अनुभव कर लेंगे। मानुषी सुख से, गंधर्वों व देवताओं के सुख से उत्तम सुख उस ब्रह्मसुख का अनुभव कर लेंगे । ॐ... ॐ... ॐ... ॐ... ॐ आनंद...

(पृष्ठ २० का शेष)

का सत्संग-लाभ दिलाना । विवेकानंद कहते थे :''तुम किसी भूखे को भोजन कराते हो, प्यासे को पानी पिलाते हो, किसीको अच्छे रास्ते लगाते हो, किसी हारे हुए में हिम्मत भरते हो... यह परोपकार तो है, बढ़िया तो है लेकिन इससे भी श्रेष्ठ है किसीको सत्संग देना-दिलाना और सत्संग दिलाने में भागीदार होना । जो किसीको सत्संग देने-दिलाने में भागीदार होता है वह मानवजाति का परम हितैषी है क्योंकि सदा के लिए सब दु:खों की निवृत्ति भगवत्तत्त्व के ज्ञान से, भगवत्स्वरूप के ध्यान से ही संभव है ।''

सारे दु:ख मिटाने का उपाय है सत्संग । जिसके विषय में मन बार-बार सुनता है उसका बार-बार चिंतन करता है । जिसके विषय में बार-बार चिंतन करता है उसके विषय में प्रीति होती है । अगर किसीका द्वेषपूर्ण चिंतन करोगे, द्वेषपूर्ण सुनोगे उसके विषय में नफरत होगी और प्रेममय सुनोगे, भगवान के विषय में सुनोगे तो प्रीति होगी । अत: सदैव भगवत्कथा का ही रसपान करें, भगवान के विषय में ही सुनें, भगवान के विषय में ही सोचें तो जीवन भी भगवानमय हो जायेगा ।

आप भगवत्कथा का श्रवण स्वयं तो करें ही, लोगों को भी उसमें भागीदार बनायें ताकि सब भगवत्कथा के श्रवण-मनन द्वारा दु:खों से निर्मुक्त होकर अपने जीवन को दिव्य बना सकें । यही श्रेष्ठ कर्म है, यही श्रेष्ठ धर्म है और वास्तव में यही सत्कर्म है ।

काव्य गुंजन

भवपार लगा देना...

गुरु ! हमपे दया करना ।
गुरु ! हमपे कृपा करना ।
तेरे दर पे आये हैं ।
अपनी करुणा कृपा करना ॥

भूले हुए हैं राही, मंजिल से बेखबर हम ।
रहमत करके अपनी, प्रभु ! राह दिखा देना ॥
गुरु......

सदियों से सो रहे हैं, सपनों के इस जहाँ में ।
देकर परम सहारा, अविद्या से जगा देना ॥
गुरु......

जड़ जीवन पत्थर सम, निज ज्ञान को क्या जाने ।
शिल्पी बनके गुरुवर ! प्रतिमा तू बना देना ॥
गुरु......

काया नगर में रहकर, 'स्व' को ना जान पाया ।
खोल द्वार मेरे दिल के, दिलबर से मिला देना ॥
गुरु......

नश्वर में खो गये हैं, विषयों ने है जो घेरा ।
देकर शाश्वत सुख को, प्रभु ! प्रेम जगा देना ॥
गुरु......

माया में रमता मनवा, रामनाम रस क्या जाने ?
हरिध्यान के उस रंग में मन को रंगा देना ॥
गुरु......

दीदार की है प्यासी अँखियाँ तेरे दरस को ।
नजरों से पिला हरिजाम, आनंद छलका देना ॥
गुरु......

'साक्षी' गुरु चरणों में, वंदन हो बार-बार ।
प्रभु ! जीवन नैया को, भव पार लगा देना ॥
गुरु......

राजा विक्रमादित्य और विस्मृतिदेवी

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

एक बार राजा विक्रमादित्य राज-काज के बोझे से थके, जगत् के चिंतन से थके-माँदे, मन बहलाने के लिए आखेट खेलने निकल पड़े ।

काम बदलने से मन बहल जाता है ।

आखेट के लिए निकले हुए राजा विक्रमादित्य एक शिकार के पीछे दौड़े... खूब दौड़े... आखिरकार भूख-प्यास से व्याकुल एवं थके-माँदे विक्रमादित्य एकान्त अरण्य में विश्राम के लिए बैठ गये ।

उन्होंने एक आश्चर्य देखा । कोई गैबी आवाज उनके कानों में पड़ी । आकाश मार्ग से कुछ देवियाँ आपस में वाद-विवाद करती जा रही थीं । विक्रमादित्य को आवाज सुनाई पड़ी कि :

उन्होंने एक आश्चर्य देखा । कोई गैबी आवाज उनके कानों में पड़ी । आकाश मार्ग से कुछ देवियाँ आपस में वाद-विवाद करती हुई जा रही थीं ।

''मैं लक्ष्मी हूँ । मुझसे बड़ी तुम नहीं हो सकती । मैं निर्धन के पास जाती हूँ तो उसकी बाछें खिल जाती हैं, वह धनवान बन जाता है । मैं जिसके पास जाती हूँ वह दुनिया की हर चीज खरीद सकता है । तुम अपने को बड़ी मानती हो ? पगली हो पगली । किसीको बोलना मत, लोग हँसेंगे । लक्ष्मी से बड़ा कोई नहीं होता । संपत्तिवान के दोष भी ढँक जाते हैं, सरस्वती !''

इतने में सरस्वती बोली : ''रहने दे, बहन ! रहने दे । लक्ष्मी कितनी भी हो लेकिन यदि व्यक्ति के पास ज्ञान नहीं है तो लोग उसको ठग ले जायेंगे । लक्ष्मी है और उसका सदुपयोग करने का ज्ञान नहीं है तो व्यक्ति कुएँ में जा पड़ेगा । ज्ञान सबसे बड़ा होता है, सरस्वती की उपासना सबसे बड़ी होती है । लक्ष्मी के बिना भी विद्वान पूजे जाते हैं और जहाँ विद्या होती है वहाँ लक्ष्मी अपने-आप आती है । विद्या से व्यक्ति इस लोक एवं परलोक दोनों में पूजा जाता है और विद्या से अविद्या को मिटाकर मुक्ति भी पा लेता है । लक्ष्मी तो भोग में गिराती है और विद्या योग में ले आती है ।''

तब शक्तिदेवी ने कहा : ''बड़ा विद्वान हो, बड़ा धनवान हो लेकिन शक्ति न हो तो शक्ति विहीन मनुष्य को लोग निचोड़ डालेंगे । शक्ति की उपासना ही सही उपासना है । मनुष्य जीवन की परम आवश्यकता है शक्ति । शक्ति ही सबसे बड़ी है । शक्तिशाली आदमी लक्ष्मी अर्जित कर लेगा, शक्तिशाली आदमी विद्या अर्जित कर लेगा, मनचाहा भोग पा लेगा, मनचाही यात्रा कर लेगा, मनचाहे रहस्य खोज लेगा और शक्तिशाली मनुष्य मनचाहे विद्वानों एवं धनवानों को अपने आधीन कर लेगा । मेरे होते हुए आप सब आपस में क्यों विवाद कर रही हैं ?''

तब लक्ष्मी और सरस्वती दोनों एक साथ बोलीं : ''रहने दे, शक्ति ! रहने दे । कई शक्तिशाली होते हैं जो पैसे के बल से बिक जाते हैं, कई शक्तिशाली होते हैं जिन्हें बुद्धिमान अपने इशारों पर नचाते रहते हैं ।''

आखिर तो तीनों सखियाँ थीं । लड़-लड़कर कब तक लड़तीं ? उन्होंने कहा : ''सुना है राजा विक्रमादित्य न्याय करने में बड़े कुशल हैं । स्वर्ग तक में विक्रमादित्य के न्याय की सराहना होती है । आज वे आखेट करके थके हैं और आराम कर रहे हैं । चलो, हम उनसे अपना न्याय करायें ।''

वे देवियाँ विक्रमादित्य के सामने प्रगट हुईं और बोलीं : ''सम्राट ! हम तीनों का फैसला करें ।''

तभी चौथी देवी ने कहा : ''तीनों का नहीं, मेरा भी । मैं अभी तक चुप बैठी थी । ये तीनों देवियाँ

अपनी-अपनी डींग हाँक रही थीं लेकिन मेरे बिना इनकी दाल तक नहीं गलती । राजन् ! मैं विस्मृतिदेवी हूँ, शांतिदेवी हूँ । हम चारों का न्याय करें कि हममें से कौन-सी देवी बड़ी है ?''

विक्रमादित्य ने कहा : ''मैं धरती के लोगों का ही न्याय करता था किन्तु आज आप लोग मेरे पास आयी हैं । मैं प्रयत्न करूँगा कि आप लोगों की सेवा हो जाये, आप लोगों को उचित न्याय मिल जाये । अतः आप लोग कृपया अपना-अपना परिचय दें ।''

लक्ष्मी : ''सम्राट ! मैं लक्ष्मी हूँ। लक्ष्मीहीन व्यक्ति किसी काम का नहीं है । जीवन में लक्ष्मी की अत्यावश्यकता है । धन से भोग, ऐश्वर्य, यश सब कुछ मिल जाता है । लक्ष्मी की लीला अपरंपार है । पैसा ही रंग-रूप है, पैसा ही माई-बाप है । बेटा पैसा कमाता है तो माँ-बाप उसे प्रेम करते हैं, पत्नी स्नेह करती है । पैसेवाले के सब मित्र बन जाते हैं, गरीब का कौन है ? लक्ष्मी ही सर्वोपरि है ।''

> *''मैं जिसके पास जाती हूँ वह दुनिया की हर चीज खरीद सकता है । लक्ष्मी से बड़ा कुछ नहीं होता । संपत्तिवान के दोष भी ढँक जाते हैं ।''*

तब सरस्वती बोली : ''छोड़ो भी... विद्या ही सर्वोपरि है । विद्या से ही सब प्राप्त होता है ।''

फिर शक्ति ने भी अपना परिचय दिया ।

सम्राट बोला : ''मैं बहुत थका हुआ हूँ फिर भी न्याय देने की कोशिश करूँगा । लेकिन पहले कोई मेरी पीड़ा को और दुःख को हर ले ताकि मैं स्वस्थ होकर न्याय कर सकूँ। निर्दुःख निश्चिन्त आदमी ही ठीक न्याय कर सकता है। मुझे थोड़ा निर्दुःख, निश्चिन्त बना दीजिए। थका-हारा व्यक्ति क्या सही निर्णय दे पायेगा ? पीड़ित आदमी क्या ठीक जवाब देगा ? आप अपने-अपने बल से मुझे स्वस्थ कर दीजिए ।''

> *''लक्ष्मी कितनी भी हो लेकिन यदि व्यक्ति के पास ज्ञान नहीं है तो लोग उसको ठग ले जायेंगे । लक्ष्मी है और उसका सदुपयोग करने का ज्ञान नहीं है तो व्यक्ति कुएँ में जा पड़ेगा । ज्ञान सबसे बड़ा होता है ।''*

तब लक्ष्मी ने अपनी यौगिक भाषा में राजा के अंतर में प्रेरणा की : ''तुम्हारा यह राज्य और भी विशाल कर दूँगी । राजन् ! तुम्हारा बहुत बड़ा राज होगा । तुम्हें और भी संपदा और सुख की सामग्रियाँ मिलेंगी, और भी हीरे-जवाहरात होंगे, और भी माणिक-मोती होंगे, तुम धनिक और सुखी होगे । मैं तुम्हें बहुत-बहुत धनवान कर दूँगी ।''

विक्रमादित्य : ''हे देवी आपके विचारों से मेरी थकान और पीड़ा नहीं मिटी। सरस्वती देवी ! अब आप अपनी शक्ति लगाईए ।''

सरस्वती : ''तुम सोचो, 'पीड़ा शरीर को हो रही है, दुःख मन को हो रहा है, आत्मा को नहीं हो रहा । मैं तो नित्य, शुद्ध, बुद्ध और मुक्त हूँ।' ऐसा सोचो... चिंतन करो... विद्या का आश्रय लो, राजन् !''

विक्रमादित्य : ''देवी ! पीड़ा में चिंतन भी ठीक से नहीं होता । सोचने की क्षमता दब रही है । हे शक्तिदेवी ! अब आप ही कुछ करिये ।''

शक्ति : ''अथाह शक्ति, अथाह बल तुममें है, राजन्। अपने पौरुष को जगाओ, अपने बल को जगाओ, अपनी शक्ति को जगाओ। शक्ति के आगे सारा दुःख और थकान भाग जाती है ।''

विक्रमादित्य : ''मैं थका हुआ हूँ, देवी ! बल कैसे जगाऊँ ?''

अब विस्मृतिदेवी आगे आयी और विक्रमादित्य को व्याकुल देखकर बोली : ''राजन् ! भूल जाओ । 'मैं आखेट को आया था...' यह भूल जाओ । 'मैं खूब दौड़ा था...' यह भूल जाओ । 'मेरी वाहवाही हो रही है... मैं सम्राट हूँ...' भूल जाओ । 'मेरे शत्रु हैं... मेरे प्रशंसक हैं...' यह भी भूल जाओ । 'मुझे यहाँ जाना है... यह पाना है...' भूल

जाओ । विस्मृति... विस्मृति... विस्मृति... सब भूलते जाओ... निश्चिंत होते जाओ... सम्राट ! यह सम्राट पद और सम्राट पद के भोग नश्वर हैं, फुरना मात्र है, उसे भूलते जाओ । कई सम्राट इस धरती पर पैदा हुए, दौड़े, थके और अंत में विस्मृतिदेवी की गोद में चिरकाल से शयन कर रहे हैं । पृथु, पुरुरवा, गाधि, नहुष, भरत, अर्जुन, मान्धाता, सगर, श्रीराम, खट्वांग, धुन्धुहा, रघु, तृणविन्दु, ययाति, शर्याति, शान्तनु, भगीरथ, कुवलयाश्व, नैषध, नृग, हिरण्यकशिपु, वृत्रासुर, रावण, नमुचि, शंबर, भौम आदि जब विद्यमान थे, उस समय इन्होंने कितनी-कितनी उपलब्धियाँ अर्जित कीं, कितनी-कितनी पताकाएँ फहराईं लेकिन सब विस्मृति की गोद में चले गये । ऐसे ही राजन् ! तुम भी एक दिन हमेशा के लिए विस्मृति की गोद में चले जाओगे । राजन् ! जब अपना मन, अपनी बुद्धि अपनी इन्द्रियाँ सात्त्विक हो जायें, ज्ञान और तपस्या में रुचि हो जाये तब समझना कि सत्य युग है । जब मन में कामना आये तो समझना कि रजोगुणी वृत्ति त्रेता है । जब लोभ, असंतोष आये तो समझना कि द्वापर है और जब मन में छल-कपट, माया, तन्द्रा, निद्रा, हिंसा विषाद आये तो समझना कि कलियुग है ।

राजन् ! वह बड़भागी है जो जीते-जी 'मैं-मेरे' की विस्मृति करके आत्मविश्रान्ति पाता है । आलस्य नहीं, निद्रा नहीं, प्रमाद नहीं अपितु सात्त्विक विश्रान्ति । विश्रान्ति... विश्रान्ति... विश्रान्ति... पवित्र शान्ति... राग-द्वेषरहित अवस्था...''

विक्रमादित्य : ''धन्य हो देवी ! मेरी थकान मिटी । अहाहा... आपके वचन प्रिय लग रहे हैं, शान्ति मिल रही है... शक्ति बढ़ रही है ।''

विस्मृति : ''राजन् ! थकान मिटी न मिटी, उसे भी भूलते जाओ... विस्मृति... विस्मृति... । संसार फुरना मात्र है, निष्फुर ब्रह्म है । हे निष्फुर ब्रह्म ! तुम अपनी महिमा में डूबते जाओ । थकान प्रकृति में होती है, शक्ति प्रकृति में होती है । सब कुछ प्रकृति में है और परिवर्तित होता रहता है । तुम उस परिवर्तन को भी भूलते जाओ...''

> *''बड़ा धनवान हो लेकिन शक्ति न हो तो शक्तिविहीन मनुष्य को लोग निचोड़ डालेंगे । मनुष्य जीवन की परम आवश्यकता है शक्ति । शक्ति ही सबसे बड़ी है ।''*

विक्रमादित्य : ''देवी ! बहुत अच्छा लग रहा है... धन, संपदा, विद्या, शक्ति सब भूलने से अच्छा लग रहा है... ।''

विस्मृति : ''तुम विस्मृति की गहराई में डूबते जाओ, जहाँ शान्त ब्रह्म के सिवा कुछ भी नहीं है । विस्मृति... विस्मृति में खो जाओ । विस्मृति से, निश्चिंतता से दोष निवृत्त होने लगते हैं, आवश्यक बल प्राप्त होने लगता है, सारे सामर्थ्य, सारी शक्तियाँ, सारी योग्यताएँ निखरती हैं । लेकिन सम्राट ! योग्यताएँ निखरें उसकी भी स्मृति न करो । विस्मृति... विसमृति... तंद्रा नहीं, निद्रा नहीं, आलस्य नहीं, प्रमाद नहीं, मनोराज्य नहीं, केवल 'मैं-मेरे' की और 'तू-तेरे' की विस्मृति । हरि ॐ शांति... हरि ॐ शांति... हरि ॐ शांति... खूब शांति... ॐ शांति... ॐ शांति... ॐ शांति... आत्मशांति... परमात्मशांति... निःसंकल्प अवस्था । आनंद आ रहा है... भूल जाओ । बल बढ़ रहा है... भूल जाओ । न बल है न निर्बलता, न आनंद है न सुख-दुःख । सुख भी मन की वृत्ति है और दुःख भी मन की वृत्ति है । तुम सुख-दुःख से परे... परम अवाच्य पद... जहाँ वाणी की गति नहीं । विक्रमादित्य ! तुम्हारे जैसा पुरुषार्थ करनेवाला अगर निःसंकल्प नारायण में विश्रान्ति नहीं पायेगा तो और कौन पायेगा ? डूबते जाओ अपने आप में । शांत आत्मा... चैतन्य आत्मा... अखंड आत्मा... व्यापक आत्मा... । न माई न भाई । ये सब शरीर

> *''कई शक्तिशाली होते हैं जो पैसे के बल से बिक जाते हैं । कई शक्तिशाली होते हैं जिन्हें बुद्धिमान अपने इशारों पर नचाते रहते हैं ।''*

और मन के फुरने मात्र हैं... सारा विश्व उस विस्मृति के सागर में विलय हो जाने दो । जैसे दरिया से तरंगें उठती हैं, बुलबुले उठते हैं, झाग और फेन उठते हैं लेकिन उस सागर की गहराई में शांति है, ऐसे ही तुम आत्म-उदधि में चले जाओ । परम शांति में... परम माधुर्य में... भूल जाओ अपने पापों को, भूल जाओ अपने पुराने दुष्कृत्यों को और भूल जाओ अपने सत्कृत्यों को । भूल जाओ अपने मित्रों को और भूल जाओ अपने शत्रुओं को । भूल जाओ पाने को और भूल जाओ खोने को... भूल जाओ... भूल जाओ... भूल जाओ... । निश्चिन्त नारायण में एक होते जाओ । तुम्हारा स्वरूप शुद्ध-बुद्ध है, तुम्हारा स्वरूप आनंदकंद है, तुम्हारा स्वरूप चैतन्य है, सम्राट ! सम्राटभान को भी भूल जाओ, सुखी हो जाओ । मुझ चैतन्य स्वरूप, चिदावली, आद्यशक्ति, चिद्घन चेतना में लीन होते जाओ... ।''

''राजन् ! वह बड़भागी है जो जीते-जी 'मैं-मेरे' की विस्मृति करके आत्म-विश्रान्ति पाता है । आलस्य नहीं, निद्रा नहीं, प्रमाद नहीं अपितु सात्त्विक विश्रान्ति ।''

विक्रमादित्य : ''अच्छा लग रहा है, माँ । चिंताएँ मिटीं, थकान मिटी, दुःख मिटे । न शक्ति की आवश्यकता है न कमजोरी का भय है, न यश की लालच है न अपयश का भय है, न मान की इच्छा है न अपमान का भय है, न जीने की आसक्ति है न मृत्यु का भय है ।''

''विस्मृति से, निश्चिंतता से दोष निवृत्त होने लगते हैं, आवश्यक बल प्राप्त होने लगता है, सारे सामर्थ्य, सारी शक्तियाँ, सारी योग्यताएँ निखरती हैं ।''

पुनः विस्मृति ने कहा :

''सम्राट ! और गोता मार । वत्स ! भूल जा । जीने की इच्छा नहीं है, इसे भी भूल जा और मरने का भय नहीं है इसको भी भूल जा । आ, मेरी गोद में आ, पूर्ण बन जा । तेरा स्वरूप पूर्ण आत्मा है... संकल्परहित अवस्था में आ जा वत्स ! जो तेरा वास्तविक स्वरूप है । इस संकल्परहित अवस्था में, शांत अवस्था में, आत्मसुख की अवस्था में आकर मनुष्य फिर कभी भयभीत नहीं होता, वह परम निर्भय हो जाता है । वह अकाल तत्त्व को पाता है । तू आ जा अपने अकाल स्वभाव में । और सब भूल जा, लाल !''

सम्राट विक्रमादित्य वास्तविक सम्राट बने जा रहा है... जहाँ दुःख की भी गंध नहीं और सुख की भी गंध नहीं... जहाँ पुण्य का गर्व नहीं और पाप की हीनता नहीं... जहाँ गरीबी की पीड़ा नहीं और अमीरी का अहंकार नहीं... जहाँ मित्र का आकर्षण नहीं और शत्रु का भय नहीं...

निर्भव जपे सकल भव मिटे ।
संत कृपा ते प्राणी छूटे ॥

जीवात्मा बंधनों से मुक्त हो जाता है... अपनी इन्द्रियों से, मन से, बुद्धि से और अन्तःकरण से माने हुए संबंध को जो विस्मृतिरूपी माता की गोद में छोड़ देता है वह ब्रह्ममय, निःशोक, निरंजन, नारायणमय हो जाता है ।

विक्रमादित्य कहते हैं : ''माँ ! बहुत अच्छा लग रहा है, उसका वर्णन नहीं कर सकता... । दौड़ रहा था शक्ति के लिए, भाग रहा था लक्ष्मी के लिए, प्रयत्न कर रहा था विद्याओं के लिए लेकिन सारी विद्याएँ, सारी शक्तियाँ, सारी सम्पत्तियाँ इसी आत्मदेव से प्रगट होती हैं, इसका पता ही न था... 'मैं' और 'मेरे' की विस्मृति, 'तू' और 'तेरे' की विस्मृति, पाप और पुण्य भावों की विस्मृति से जन्मों-जन्मों की थकान मिटती जा रही है...''

अपने आत्म-परमात्मस्वभाव में सम्राट विक्रमादित्य की ब्रह्माकार वृत्ति बनती जा रही थी ।

ब्राह्मी स्थिति प्राप्त कर, कार्य रहे ना शेष ।
मोह कभी न ठग सके, इच्छा नहीं लवलेष ॥

अब लक्ष्मी ने पूछा : ''सम्राट ! सबसे बड़ी लक्ष्मी है, सरस्वती है या शक्ति है ?''

विक्रमादित्य : ''माँ ! आप तीनों देवियों के द्वारा

किये गये प्रयास से भी मुझे वह सुख और शांति नहीं मिली जोकि मुझे विस्मृति देवी के सान्निध्य से मिली । हे लक्ष्मीदेवी ! क्षमा करना । कितना भी धन हो प्राणी के पास, फिर भी वह पूर्ण सुखी नहीं हो सकता है । कितनी भी विद्या हो प्राणी के पास फिर भी वह पूर्ण सुखी नहीं हो सकता है ।

पढ़ पढ़ के पत्थर भया
लिख लिख भया है चोर।
जा करनी ते साहिब मिले
वह करनी कछु और॥

पढ़-पढ़कर तो कठोरता आ जाती है । हे सरस्वती देवी ! क्षमा करना । इस लोक एवं परलोक की कितनी भी विद्या मिल जाये, लेकिन यह लोक एवं परलोक जिससे प्रतीत होता है उसमें जब तक विश्रान्ति नहीं मिली तब तक मनुष्य के संपूर्ण दोष दूर नहीं होते, संपूर्ण दुःख निवृत्त नहीं होते और आवश्यक सामर्थ्य भी नहीं मिलता है । हे शक्तिदेवी ! कितना भी बाहुबल हो, जनबल हो लेकिन मृत्यु के पार ले जाने का सामर्थ्य इस बाहुबल और जनबल में नहीं है । 'निर्बल के बल जो राम हैं' उन्हीं राम में आराम पाने से ही प्राणी भवपार होता है... । हे शक्तिदेवी ! विश्रान्ति पाये हुए ब्रह्म की तुम एक किरण हो । हे सरस्वतीदेवी ! तुम दूसरी किरण हो । हे लक्ष्मीदेवी ! तुम तीसरी किरण हो लेकिन माँ विस्मृतिदेवी ने मुझे उस ब्रह्म में पुनः पहुँचाया है और मैं ब्रह्मस्वरूप हुआ हूँ । मेरी वृत्ति जागी तो मैं भी किरण होकर दिख रहा हूँ, लेकिन जब मैं उस ब्रह्मस्वरूप में विश्रान्ति पाता हूँ तब मुझे लगता है कि तुम सभी मुझ ही में से प्रगट हुई हैं ।'' ॐ आनंद... ॐ शांति... ॐ माधुर्य...

''कितना भी बाहुबल हो, जनबल हो लेकिन मृत्यु के पार ले जाने का सामर्थ्य इस बाहुबल और जनबल में नहीं है । 'निर्बल के बल जो राम हैं' उन्हीं राम में आराम पाने से ही प्राणी भवपार होता है... ।''

महान बनना कठिन नहीं है । अति कामी, कुटिल, जो पत्नी के पीछे-पीछे ससुराल तक गये, ऐसे तुलसीदास पत्नी के एक वाक्य से जग गये और महान संत तुलसीदास बन गये । वे स्वयं कहते हैं :

तुलसी-तुलसी क्या करो
तुलसी बन की घास ।
कृपा भई रघुनाथ की
तो हो गये तुलसीदास ॥

आपको जो सत्संग मिलता है उसको बार-बार दोहराना, बार-बार उन पवित्र विचारों में, भगवान के संकेतों में अपने मन को ले आना । ऑफिस में भी उन्हीं विचारों को ताजा करना । भोजन करते समय भी देखना कि यह भोजन हमारे विचारों को मलिन करनेवाला है या शुद्ध करनेवाला । सदा शुद्ध, पवित्र सात्त्विक और सादा आहार ही लेना । सुनते समय, बोलते समय, खाते समय थोड़ी सावधानी रखना । थोड़े दिन मेहनत करनी पड़ेगी । अभ्यास करते-करते आपकी आदत ऐसी हो जायेगी कि आप चलते-फिरते भी भगवान की मस्ती में रहोगे । यह कठिन नहीं है, अटपटा है । झटपट समझ में नहीं आता और एक बार यदि समझ में आ जाये तो चौरासी लाख जन्मों की खटपट सदा के लिए मिट जाये ।

❀

जीवन में प्रेम ही बाँटों, सुख ही बाँटों, दुःख न बाँटो । प्रेम और सुख बाँटोगे तो बदले में वे ही वापस आकर मिलेंगे । उसे कोई रोक नहीं सकता ।...हाँ, बदले की अपेक्षा न रखो ।

ज्ञान-विज्ञान से तृप्त

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

सर्वभूतसुहृच्छान्तो ज्ञानविज्ञाननिश्चयः ।
पश्यन् मदात्मकं विश्वं न विपद्येत वै पुनः ॥

'जिसने श्रुतियों के तात्पर्य का यथार्थ ज्ञान ही नहीं प्राप्त कर लिया, बल्कि उसका साक्षात्कार भी कर लिया है और इस प्रकार जो अटल निश्चय से संपन्न हो गया है, वह समस्त प्राणियों का हितैषी सुहृद होता है और उसकी वृत्तियाँ सर्वथा शान्त रहती हैं । वह समस्त प्रतीयमान विश्व को मेरा ही स्वरूप-आत्मस्वरूप देखता है, इसलिए उसे फिर कभी जन्म-मृत्यु के चक्कर में नहीं पड़ना पड़ता ।'

(श्रीमद्भागवत : ११.२.१२)

ज्ञानी तो ज्ञानी हैं । उन्हें अज्ञानियों की व्यर्थ बकवास से कोई फर्क नहीं पड़ता । वे तो निर्लेप नारायण ! अपनी मस्ती में मस्त रहते हैं ।

ज्ञानी सब प्राणियों के मित्र हैं, शांत हैं और ज्ञान-विज्ञान के दृढ़ निश्चय से संपन्न होते हैं । संपूर्ण जगत् को वे अपना रूप देखते हैं और किसी भी प्रकार की विपत्ति में नहीं पड़ते हैं ।

ज्ञानी के निकट बैठने से जो आनंद मिलता है वह चान्द्रायण व्रत रखने से या गंगा-स्नान से भी नहीं मिलता ।

योगवाशिष्ठ महारामायण में वशिष्ठजी महाराज भगवान श्रीराम से कहते हैं कि ज्ञानी के निकट बैठने से जो आनंद मिलता है वह चान्द्रायण व्रत रखने से या गंगा-स्नान से भी नहीं मिलता । ज्ञानी अपनी निजानंदी मस्ती में मस्त, सुखस्वरूप परमात्मा में सुखी और शान्त होते हैं ।

भोजन छाजन नीर की चिंता करे सो मूढ़ ।
ज्ञानी चिंता ना करे, निज पद में आरूढ़ ॥

ज्ञानी खाने-पीने और रहने-ठिकाने की चिन्ता नहीं करते क्योंकि वे जहाँ कदम रखते हैं वहाँ प्रकृति उनकी सेवा में हाजिर रहती ही है और जो ज्ञानियों की सेवा करते हैं उनकी सेवा करनेवाले का भी प्रकृति बेड़ा पार कर देती है ।

फिर ज्ञानी सत्संग क्यों करे ? आश्रम क्यों चलाये ?

अरे भैया !... ज्ञानियों के लिए अगर नियम है तो ज्ञान का मतलब ही क्या ? मुक्त का मतलब क्या ? मुक्त का मतलब है कि जिसे कोई बंधन नहीं, जिसको कोई कर्त्तव्य नहीं और जिसको कोई निषेध भी नहीं । जब तक कर्त्तव्य में बंधन है तब तक अज्ञान जारी है । ज्ञानी का कार्य सहज में होता है । ज्ञान होने के बाद यदि प्रारब्ध प्रवृत्तिप्रधान हो तो वे सहज में प्रवृत्ति करते हैं और यदि प्रारब्ध निवृत्तिप्रधान हो तो वे सहज में निवृत्ति का मजा लेते हैं । अखा भगत ने कहा है :

राज करे रमणी रमे कै ओढ़े मृगछाल ।
जो करे सो सहज में सो साहिब का लाल ॥

शास्त्र में ऐसा भी कहा गया है :

शुकः त्यागी कृष्ण भोगी जनक राघव नरेन्द्रः ।
वशिष्ठः कर्मनिष्ठश्च सर्वेषां ज्ञानीनां समान मुक्ताः ॥

वशिष्ठजी सत्संग करते-करते भी संध्या के समय सत्संग बंद करके संध्या-वंदन के लिए उठ खड़े होते हैं । भगवान श्रीकृष्ण सोने की द्वारिका बसाते हैं, ऐहिक सुख-सुविधाओं का उपभोग

भी करते हैं परन्तु उससे निर्लिप्त रहते हैं । शुकदेवजी परम ज्ञानी हैं, ब्रह्मवेत्ता हैं लेकिन उनका प्रारब्ध निवृत्ति-प्रधान है अतः उनका जीवन निवृत्तिप्रधान दृष्टिगोचर होता है । फिर भी जब परीक्षित का प्रारब्ध जोर करता है तब शुकदेवजी महाराज गंगा किनारे जाकर भरसभा में परीक्षित को सत्संग सुनाते हैं। मार्ग में कोई उन्हें कंकड़ मारते हैं, कोई पागल कहते हैं, हँसी उड़ानेवाले उनकी हँसी उड़ाते हैं लेकिन शुकदेवजी के चित्त में न हर्ष होता है न शोक ।

ज्ञानी जहाँ कदम रखते हैं वहाँ प्रकृति उनकी सेवा में हाजिर रहती ही है और जो ज्ञानियों की सेवा करते हैं उनकी सेवा करनेवाले का भी प्रकृति बेड़ा पार कर देती है ।

शुकदेवजी जब गंगा किनारे पहुँचे तब उन्हें सोने के सिंहासन पर बैठाकर राजा परीक्षित और साधु-संतों ने उनका आदर-सत्कार किया उस वक्त शुकदेवजी हर्षित नहीं हुए और मूर्ख लोगों ने उनका अनादर किया, अफवाहें फैलायीं फिर भी उनके चित्त में शोक नहीं हुआ ।

हर्ष शोक जा के नहीं वैरी मीत समान ।
कह नानक सुन रे मना मुक्त ताहि ते जान ॥
जैसा अमृत वैसी विष खाटी ।
जैसा मान वैसा अपमाना ॥

जिसने अपने शुद्ध चैतन्य स्वरूप को जान लिया है, वह मान-अपमान और हर्ष-शोक को अपने में नहीं मानता। श्री अष्टावक्र महाराज ने भी राजा जनक से कहा :

जिसने अपने शुद्ध चैतन्य स्वरूप को जान लिया है, वह मान-अपमान और हर्ष-शोक को अपने में नहीं मानता ।

धीरो न द्वेष्टि संसारं आत्मानं न दिदृक्षति ।
हर्षमहर्षविनिर्मुक्तः न मृतो न च जीवति ॥

जो धीर पुरुष हैं, ज्ञानी हैं, वे संसार की किसी भी परिस्थिति से राग नहीं करते । वे सुख के समय सुखी होते हुए और दुःख के समय दुःखी होते हुए दिखते हैं फिर भी एक ऐसी ऊँचाई पर खड़े हैं कि सुख और दुःख उन्हें स्पर्श तक नहीं कर सकते । उनका मन हर्ष एवं शोक करता हुआ दिखेगा किन्तु वे तो वास्तव में मन से पार अपने स्वरूप में पहुँचे हुए होते हैं । वे अपने बोध से, अपने ज्ञान से इतने तृप्त होते हैं कि फिर उनको परिस्थितियों का कोई असर नहीं होता । वे जो भी करते हैं, सहज में करते हैं । उनकी हर चेष्टा ज्ञान देनेवाली, आनंद देनेवाली, स्वाभाविक एवं सहज होती है ।

श्रीकृष्ण आनंदस्वरूप हैं, आत्मज्ञानी हैं, फिर भी युद्ध के मैदान में अर्जुन की घोड़ागाड़ी चलाने में भी संकोच नहीं करते । श्रीरामजी 'हाय सीता ! हाय सीता...' करते हुए दिखते हैं लेकिन भीतर से परम शांत हैं । सुकरात ने तो मानवजाति को अमृत दिया लेकिन दुष्ट लोगों ने उनको जहर दिया फिर भी सुकरात दुःखी नहीं हुए । अब यदि अज्ञानी मनुष्य, ज्ञानियों के बाह्य व्यवहार को देखकर अपनी अल्प मति से उनका नापतौल करने लगे कि श्रीकृष्ण ने घोड़ागाड़ी क्यों चलाई ? श्रीरामजी को 'हाय सीता ! हाय लक्ष्मण !' नहीं करना चाहिए । जिसस यहूदियों के देश में क्यों गये ? सुकरात ने मूर्खों के बीच उपदेश क्यों दिया ?... ये सब अज्ञानियों का मापदंड है पर ज्ञानी तो ज्ञानी हैं । उन्हें अज्ञानियों की व्यर्थ बकवास से कोई फर्क नहीं पड़ता । वे तो निर्लेप नारायण ! अपनी मस्ती में मस्त रहते हैं ।

जो ज्ञान-विज्ञान से तृप्त हो गये हैं, सब भूतों में अपना आत्मा, अपना चैतन्य देख रहे हैं वे समझते हैं कि मन भिन्न-भिन्न होते हैं, आकृतियाँ भिन्न-भिन्न होती हैं परन्तु मन और आकृतियों के भिन्न होते हुए भी आत्मा अभिन्न है । उनकी निगाहें तो मानो यह कहती हैं कि 'चाहे तू कोई भी रूप लेकर आ लेकिन हम तुझे पहचान जायेंगे ।'

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते ।

'इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र निःसन्देह कुछ भी नहीं है ।'

यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन ।
ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा ॥

(श्रीमद्भगवद्गीता : ४.३८)

जैसे लकड़ी के ढेर को अग्नि जलाकर भस्म कर देती है, वैसे ही तमाम प्रकार के कर्मों को ज्ञानाग्नि जलाकर भस्मीभूत कर देती है । इसलिए तत्त्वज्ञान में ठीक से प्रवेश करना चाहिए ।

जो ज्ञान-विज्ञान से तृप्त हैं, ऐसे ब्रह्मज्ञानी के आगे शुभ कामनाएँ करने से वे देर-सबेर फलने लगती हैं । उनके सान्निध्य से ऐसे अनंत फल की प्राप्ति होती है कि जिसका बयान नहीं किया जा सकता ।

श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं :

निर्मानमोहा जितसंगदोषा
अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः ।
द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञै-
र्गच्छन्त्यमूढाः पदमव्ययं तत् ॥

'जो मान एवं मोह से छूटे हुए हैं, आसक्तिरूप दोषों को जिन्होंने जीत लिया है, जो नित्य ज्ञान की खोज में तत्पर हैं, जिनकी कामनाएँ छूट गयी हैं तथा जो सुख-दुःखादि द्वन्द्वों से छूट गये हैं ऐसे विवेकी जन उस अविनाशी पद को प्राप्त होते हैं ।

(श्रीमद्भगवद्गीता : १५.५)

जो मूढ़ नहीं हैं, जो देह को 'मैं' मानकर जिंदगी बरबाद करने में नहीं मानते ऐसे जो बुद्धिमान हैं वे लोग ही अव्यय पद पर पहुँच सकते हैं जहाँ पहुँचने के बाद आदमी गिरता नहीं है । ऐसे ज्ञानी अपने-आपमें तटस्थ होते हैं । भगवान श्रीकृष्ण उद्धव से कहते हैं कि ज्ञानी सब प्राणियों के मित्र हैं, शांत हैं और ज्ञान-विज्ञान के दृढ़ निश्चय से संपन्न हैं । संपूर्ण जगत् को वे अपना रूप देखते हैं और किसी प्रकार की विपत्ति में नहीं पड़ते । विपत्ति तो आती है लेकिन विपत्तियों में घबराते नहीं हैं वरन् विपत्तियों को रवाना कर देते हैं । अपनी समदृष्टि से वे संपत्ति और विपत्ति दोनों का उपयोग कर लेते हैं ।

जो ज्ञान-विज्ञान से तृप्त हैं, ऐसे ब्रह्मज्ञानी के आगे शुभ कामनाएँ करने से वे देर-सबेर फलने लगती हैं । उनके सान्निध्य से ऐसे अनंत फल की प्राप्ति होती है कि जिसका बयान नहीं किया जा सकता । धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष- ये चारों द्वार खुलने लगते हैं ।

ऐसे ज्ञान-विज्ञान में प्रतिष्ठित, ब्रह्मस्वरूप में स्थित महापुरुष यदि सद्गुरु के रूप में मिल जायें तो महाराज ! आपको अनंत फल मिल जाता है । उस फल की बराबरी दुनिया की कोई चीज नहीं कर सकती । इस बात को कबीरजी ने अपने ढंग से कहा :

तीरथ नहाये एक फल संत मिले फल चार ।
सद्गुरु मिले अनंत फल कहत कबीर विचार ॥

साधक को सार-असार का, सत्य-असत्य का, शाश्वत-नश्वर का विवेक होना चाहिए । शाश्वत क्या है नश्वर क्या है ? सार क्या है असार क्या है ? सदा क्या रहेगा और छूट क्या जायेगा ? इस प्रकार का जब तक विवेक नहीं होगा तब तक श्रीकृष्ण जैसे, ब्रह्माजी जैसे गुरु भी मिल जायें, ज्ञानेश्वर जैसे, तुकारामजी जैसे संत भी मिल जायें तब भी लोग जीवन को धन्य नहीं कर पाते क्योंकि वे अपना विवेक नहीं जगाते ।

❀

भगवान के लिए अगर भाव नहीं है तो संसार के लिए भाव बहेगा । प्रभु के लिए प्रीति नहीं है तो संसार के साधनों के लिए प्रीति होगी । प्रीति तो तुम्हारी परमात्मा के लिए हो और उपयोग संसार का हो ।

मंत्रजाप का प्रभाव

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

जपात् सिद्धिः जपात् सिद्धिः जपात् सिद्धिर्न संशयः ।

जप में चार बातें होती हैं : (१) श्रद्धा व तत्परता (२) संयम (३) एकाग्रता (४) शब्दों का गुंथन

एक है शब्द की व्यवस्था। जैसे ॐ... ह्रीं... क्लीं... हुँ... फट्... ऐं आदि मंत्र हैं । इनका कोई विशेष मतलब नहीं दिखता है लेकिन वे हमारी सुषुप्त शक्ति को जगाने में एवं हमारे संकल्प को वातावरण में फैलाने में बड़ी मदद करते हैं । जैसे आप फोन के नंबर डायल करते हैं तो सेटेलाइट सिस्टम में गति होने से अमेरिका में आपके मित्र के घर फोन की रिंग बजती है । इससे भी ज्यादा सूक्ष्म मंत्र का प्रभाव होता है । यंत्र जब इतना प्रभाव दिखा सकता है तो मंत्र का तो इससे भी कई गुना अधिक प्रभाव होता है । लेकिन मंत्रविज्ञान को जाननेवाले गुरु एवं मंत्र का फायदा उठानेवाला साधक मिले तभी उसकी महिमा का पता लगता है ।

यंत्र जब इतना प्रभाव दिखा सकता है तो मंत्र का तो इससे भी कई गुना अधिक प्रभाव होता है । लेकिन मंत्रविज्ञान को जाननेवाले गुरु एवं मंत्र का फायदा उठानेवाला साधक मिले तभी उसकी महिमा का पता लगता है ।

एक बार रावण दशरथ के पास गया । उस वक्त दशरथ अयोध्या में न होकर गंगा के किनारे गये हुए थे । रावण के पास उड़ने की सिद्धि थी अत: वह तुरंत दशरथ के पास पहुँच गया और जाकर देखता है कि दशरथ किनारे पर बैठकर चावल के दानों को एक-एक करके गंगाजी में जोर से मार रहे हैं । आश्चर्यचकित हो रावण ने पूछा : "हे अयोध्यानरेश ! यह आप क्या कर रहे हैं ?"

दशरथ : "जंगल में शेर बहुत ज्यादा हो गये हैं । उन्हें मारने के लिए एक-एक शेर के पीछे क्या घूमूँ ? यहाँ से ही उनको यमपुरी पहुँचा रहा हूँ ।"

रावण का आश्चर्य और अधिक बढ़ गया अत: वह जंगल की ओर गया और देखा कि कहीं कोने से तीर आते हैं और जो फालतू शेर हैं उन्हें लगते हैं और शेर मर जाते हैं ।

श्रीमद्भागवत में कथा आती है कि परीक्षित को तक्षक ने काटा । यह जानकर जन्मेजय को बड़ा क्रोध आया और वह सोचने लगा : 'मेरे पिता को मारनेवाले उस अधम सर्प से जब तक मैं वैर न लूँ तब तक मैं पुत्र कैसा ?'

यह सोचकर उसने मंत्रविज्ञान को जाननेवालों को एकत्रित करके विचार-विमर्श किया और सर्पयज्ञ का आयोजन किया । यज्ञ में मंत्रों के प्रभाव से साँप खिंच-खिंचकर आने लगे और उस यज्ञकुण्ड में गिरकर मरने लगे । ऐसा करते-करते बहुत सारे सर्प अग्नि में स्वाहा हो गये किन्तु तक्षक नहीं आया । यह देखकर जन्मेजय ने कहा :

"हे ब्राह्मणों ! जिस अधम तक्षक ने मेरे पिता को मार डाला, वह अभी तक क्यों नहीं आया ?"

तब ब्राह्मणों ने कहा : " हे राजन् ! तक्षक रूप बदलना जानता है और इन्द्र से उसकी मित्रता है । जब मंत्र के प्रभाव से सब सर्प खिंच-खिंचकर आने लगे तो इस बात का पता लगते ही वह सावधान होकर इन्द्र की शरण में पहुँच गया है और इन्द्र के आसन से लिपटकर बैठ गया है ।"

जन्मेजय : "हे भूदेव ! इन्द्रासन समेत वह तक्षक आकर हवनकुण्ड में आ गिरे ऐसा मंत्र क्यों नहीं पढ़ते ?"

ब्राह्मणों ने जब जन्मेजय के कहने पर तद्नुसार मंत्र पढ़ा तो इन्द्रासन डोलने लगा ।

कैसा अद्‌भुत सामर्थ्य है मंत्रों में !

इन्द्रासन के डोलने पर इन्द्र को घबराहट हुई कि अब क्या होगा ? वे गये देवगुरु बृहस्पति के पास और उनसे प्रार्थना की। इन्द्र की प्रार्थना सुनकर जन्मेजय के पास बृहस्पति प्रगट हुए और उसे समझाकर यज्ञ बंद करवा दिया ।

मंत्रविज्ञान को जाननेवालों को एकत्रित करके विचार-विमर्श किया और सर्पयज्ञ का आयोजन किया । यज्ञ में मंत्रों के प्रभाव से साँप खिंच-खिंचकर आने लगे और उस यज्ञकुण्ड में गिरकर मरने लगे ।

मंत्रोच्चारण, मंत्रों के शब्दों का गुंथन, जापक की श्रद्धा, सदाचार और एकाग्रता... ये सब मंत्र के प्रभाव पर असर करते हैं । जापक की यदि श्रद्धा नहीं है तो मंत्र का प्रभाव इतना नहीं होगा जितना होना चाहिए । श्रद्धा है लेकिन मंत्र का गुंथन विपरीत है तो भी विपरीत असर होता है । जैसे- यज्ञ किया कि 'इन्द्र को मारनेवाला पुत्र पैदा हो' लेकिन संस्कृत में ह्रस्व और दीर्घ की गलती से 'इन्द्र से मरनेवाला पुत्र पैदा हो' ऐसा बोल दिया गया तो वृत्रासुर पैदा हुआ जो इन्द्र को मार नहीं पाया किन्तु स्वयं इन्द्र के हाथों मारा गया । अत: मंत्र के शब्दों का गुंथन सही होना चाहिए । जैसे फोन पर यदि 011 डायल करना है तो 011 ही डायल करना पड़ेगा । ऐसा नहीं कि 101 कर दिया और यदि ऐसा किया तो गलत हो जायेगा । जैसे अंक को आगे-पीछे करने से नंबर गलत हो जाता है ऐसे ही मंत्र के गुंथन में शब्दों के आगे-पीछे होने से उसका प्रभाव बदल जाता है ।

जापक की यदि श्रद्धा नहीं है तो मंत्र का प्रभाव इतना नहीं होगा जितना होना चाहिए । श्रद्धा है लेकिन मंत्र का गुंथन विपरीत है तो भी विपरीत असर होता है ।

जापक की श्रद्धा, एकाग्रता और संयम के साथ-साथ मंत्र देनेवाले की महत्ता का भी मंत्र पर गहरा प्रभाव पड़ता है । जैसे किसी बात को चपरासी कहे तो उतना असर नहीं होता किन्तु वही बात यदि राष्ट्रपति कर दे तो उसका बड़ा असर होता है । जैसे- राष्ट्रपतिपद का व्यक्ति यदि हस्ताक्षर करता है तो उसका राष्ट्रव्यापी असर होता है ऐसे ही जिसने आनंदमय कोष से पार आनंदस्वरूप ईश्वर की यात्रा कर ली है ऐसे ब्रह्मज्ञानी सद्‌गुरु द्वारा प्रदत्त मंत्र ब्रह्माण्डव्यापी प्रभाव रखता है । निगुरा आदमी मरने के बाद प्रेतयोनि से सहज में छुटकारा नहीं पाता परन्तु जिन्होंने ब्रह्मज्ञानी गुरुओं का मंत्र ले रखा है उन्हें प्रेतयोनि में भटकना नहीं पड़ता । जैसे पुण्य और पाप मरने के बाद भी पीछा नहीं छोड़ते हैं ऐसे ही ब्रह्मवेत्ता द्वारा प्रदत्त गुरुमंत्र भी साधक का पीछा नहीं छोड़ता है । जैसे कबीरजी को उनके गुरु से 'राम-राम' मंत्र मिला । 'राम-राम' मंत्र तो रास्ते जाते लोग भी दे सकते हैं किन्तु उसका इतना असर नहीं होता लेकिन पूज्यपाद रामानंद स्वामी ने जब कबीरजी को 'राम-राम' मंत्र दिया तो कबीरजी कितनी ऊँचाई पर पहुँच गये, दुनिया जानती है । तुलसीदासजी ने कहा है :

मंत्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा ।
पंचम भजन सो बेद प्रकासा ॥

अभी डॉक्टर लिवर लिजेरिया एवं दूसरे डॉक्टर कहते हैं कि **ह्रीं, हरि, ॐ** आदि मंत्रों के उच्चारण से शरीर के विभिन्न भागों पर भिन्न-भिन्न असर पड़ता है । उस डॉक्टर लिवर लिजेरिया ने तो सत्रह वर्षों के अनुभव के पश्चात् यह खोज निकाला कि **'हरि'** के साथ अगर **'ॐ'** शब्द को मिलाकर उच्चारण किया जाये तो पाँच ज्ञानेन्द्रियों पर उसका अच्छा प्रभाव पड़ता है एवं नि:संतान व्यक्ति को मंत्र के बल से संतान दी जा सकती है जबकि हमारे भारत के ऋषि-मुनियों ने इससे भी अधिक जानकारी हजारों-लाखों वर्ष पहले शास्त्रों में वर्णित कर दी है । हजारों

वर्ष पूर्व हमारे साधु-संत जो कर सकते थे उस बात पर विज्ञान अभी कुछ-कुछ खोज कर रहा है ।

आकृति के साथ शब्द का प्राकृतिक एवं मनोवैज्ञानिक संबंध है । मैं कह दूँ 'रावण' तो आपके चित्त एवं मन में रावण की आकृति और संस्कार उभर आयेंगे और मैं कह दूँ : 'लालबहादुर शास्त्री' तो नाटा-सा कद एवं ईमानदारी में दृढ़ ऐसे नेता की आकृति और भाव आ जायेंगे ।

डॉ. लिवर लिजेरिया ने मंत्र के प्रभाव की खोज केवल भौतिक या स्थूल शरीर तक ही की है जबकि हमारे ऋषियों ने आज से हजारों वर्षों पूर्व केवल स्थूल शरीर तक ही मंत्र के प्रभाव को नहीं वरन् इससे भी आगे कहा है कि यह भौतिक शरीर अन्नमय है । इसके अंदर चार शरीर और भी हैं : (१) प्राणमय (२) मनोमय (३) विज्ञानमय (४) आनंदमय । इन सबको चेतना देनेवाले चैतन्य स्वरूप की भी खोज कर ली है । अगर प्राणमय शरीर निकल जाता है तो अन्नमय शरीर मुर्दा हो जाता है । प्राणमय शरीर का भी संचालन करनेवाला मनोमय शरीर है । मन के संकल्प-विकल्प के आधार पर ही प्राणमय शरीर क्रिया करता है । मनोमय शरीर के भीतर विज्ञानमय शरीर है । पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और बुद्धि- इसको विज्ञानमय शरीर बोलते हैं । मनोमय शरीर को सत्ता यही विज्ञानमय शरीर देता है । बुद्धि ने निर्णय किया कि मुझे डॉक्टर बनना है । मन उसी विषय में चला, हाथ-पैर उसी विषय में चले और आप बन गये डॉक्टर । लेकिन इस विज्ञानमय कोष से भी गहराई में आनंदमय कोष है । कोई भी कार्य हम क्यों करते हैं ? इसलिए कि हमें और हमारे मित्रों को आनंद मिले । दाता दान करता है तो भी आनंद के लिए करता है । भगवान के आगे हम रोते हैं तो भी आनंद के लिए एवं हँसते हैं तो भी आनंद के लिए । जो भी चेष्टा करते हैं आनंद के लिए करते हैं क्योंकि परमात्मा आनंदस्वरूप है और उसके निकट का जो कोष है उसे आनंदमय कोष कहते हैं । अत: जो भी आनंद आता है वह परमात्मा का आनंद है । परमात्मा आनंदस्वरूप है और मंत्र उस परमात्मा तक के इन पाँचों कोषों पर प्रभाव डालता है । भगवन्नाम के जप से पाँचों कोषों में, समस्त नाड़ियों में एवं सातों केन्द्रों में बड़ा सात्त्विक असर पड़ता है । मंत्रजाप की महत्ता जानकर ही ५०० वर्ष पहले नानकजी ने कहा :

भयनाशन दुर्मति हरण कलि में हरि का नाम ।
निशिदिन नानक जो जपे सफल होवहिं सब काम ॥

'हरि' के साथ अगर 'ॐ' शब्द को मिलाकर उच्चारण किया जाये तो पाँच ज्ञानेन्द्रियों पर उसका अच्छा प्रभाव पड़ता है एवं नि:संतान व्यक्ति को मंत्र के बल से संतान दी जा सकती है ।

तुलसीदासजी ने भी कहा है :

कलिजुग केवल हरि गुन गाहा ।
गावत नर पावहिं भव थाहा ॥

'कलियुग में तो केवल श्रीहरि की गुणगाथाओं का गान करने से ही मनुष्य भवसागर की थाह पा जाते हैं ।'

(श्रीरामचरित० उत्तरकाण्ड : १०२,२)

तुलसीदासजी ने तो यहाँ तक कह दिया है कि :

कृतजुंग त्रेताँ द्वापर पूजा मख अरु जोग ।
जो गति होइ सो कलि हरि नाम ते पावहिं लोग ॥

'सत्युग, त्रेता और द्वापर में जो गति पूजा, यज्ञ और योग से प्राप्त होती है, वही गति कलियुग में लोग केवल भगवान् के नाम के गुणगान से पा जाते हैं ।'

(श्रीरामचरित. उत्तरकाण्ड : १०२)

जब भक्ति शुरू होती है तब भीतर का कल्मष दूर होने लगता है । दूसरे भक्तों का संग अच्छा लगता है । आहार-विहार बदलकर सात्त्विक हो जाता है । सद्गुण पनपने लगते हैं । व्यक्ति के चित्त में दिव्य चेतना का प्रभाव और आनन्द विकसित होने लगता है ।

सत्कर्म से भी सत्संग श्रेष्ठ

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

जिन्ह हरिकथा सुनी नहिं काना ।
श्रवण रंध्र अहि भवन समाना ॥

'जिन्होंने अपने कानों से भगवान् की कथा नहीं सुनी, उनके कानों के छिद्र साँप के बिल के समान हैं ।' (श्रीरामचरित० बालकाण्ड : ११२,१)

अगर जीवन में भगवत्कथा नहीं आयी तो संसार की व्यथा अवश्य आयेगी । 'यह अच्छा है... यह बुरा है... यह ऐसा है... यह वैसा है...' जैसा सुनेगा वैसा ही मन में चिन्तन होता रहेगा, मन भटकता रहेगा ।

मनुष्य को सत्कर्म करना चाहिए, निष्काम कर्म करना चाहिए लेकिन निष्प्रयोजन कर्म नहीं करना चाहिए । निष्प्रयोजन कर्म समय-शक्ति को तो खा ही जाता है साथ-ही-साथ हमारे जीवन को भी निगल जाता है । अत: यदि निष्प्रयोजन सुनेंगे तो मन निष्प्रयोजन संकल्प-विकल्प करेगा, निष्प्रयोजन प्रवृत्ति होगी, फिर जीवन भी निष्प्रयोजन हो जायेगा । अत: व्यर्थ की बातों से बचते हुए भगवत्कथा, संतकथा, सत्संग ही सुनना चाहिए ।

> *मनुष्य को सत्कर्म करना चाहिए, निष्काम कर्म करना चाहिए लेकिन निष्प्रयोजन कर्म नहीं करना चाहिए । निष्प्रयोजन कर्म समय-शक्ति को तो खा ही जाता है और हमारे जीवन को भी निगल जाता है ।*

खाना-पीना, यह जीवन का प्रयोजन नहीं, वरन् जीवन का प्रयोजन मुक्ति है । जीवन का प्रयोजन शाश्वत सुख है । भागवत में आता है कि जिसने भगवत्कथा नहीं सुनी अथवा दूसरों को सुनाने में जो भागीदार नहीं हुआ ऐसा सत्कर्म से विमुख व्यक्ति मनुष्यरूप में द्विपाद पशु है ।

किसी हारे हुए में हिम्मत भरना, भूखे को भोजन कराना, प्यासे को पानी पिलाना, अनपढ़ को पढ़ाई के रास्ते लगाना ये सब सत्कर्म तो हैं... लेकिन इनसे सदा के लिये दुःखनिवृत्ति नहीं होती । सदा के लिए दुःख निवृत्त करने का सामर्थ्य यदि किसीमें है तो वह सत्संग में है ।

तुम घर-घर को सदाव्रत में बदल दो, लोगों को नौकरी दिला दो, बंगला दिला दो, एक-एक व्यक्ति के पीछे एक-एक डॉक्टर, एक-एक गाड़ी और एक-एक महल की व्यवस्था कर दो फिर भी जब तक उनके मन में दुःख का सर्जन होता रहेगा तब तक मनुष्य जाति दुःख से मुक्त नहीं होगी ।

ऐसा नहीं कि जो धन से गरीब है वही दुःखी है । नहीं... नहीं... जिनके पास प्रचुर मात्रा में धन-संपत्ति और सुख-सुविधाएँ हैं वे भी बेचारे परेशान और दुःखी हैं । यहाँ से अमेरिका के लोगों का जीवन अधिक संपन्न है किन्तु मानसिक रोगी एवं अशांत व्यक्ति भी वहीं ज्यादा हैं । इसका कारण है कि वहाँ ऐहिक सुख-सुविधाएँ तो खूब हैं लेकिन आत्मशांति दिलानेवाले सत्संग की सुलभता नहीं है । जबकि भारत में लोग आर्थिक दृष्टि से कमजोर होने पर भी उनमें शांति व आनंद है और उसका कारण है सत्संग, भगवत्कथा का श्रवण, 'श्रीराम... जय-राम... जय-जय राम...' या 'हरि...हरि ॐ' के श्रवण-कीर्तन में लोगों की आस्था ।

दूसरों के दुःख की निवृत्ति के लिए ऐहिक साधन देना-दिलाना अच्छा है लेकिन इससे भी बढ़िया तो यह है कि उनको आत्मानुभव से तृप्त संत-महापुरुषों

(शेष पृष्ठ ८ पर)

ईरानी फकीर फरीदुद्दीन अत्तार

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

संत-महापुरुषों की करुणा-कृपा से क्या नहीं होता ? जाने-अनजाने उनके द्वारा हुई चेष्टाओं में न जाने कितनों का कल्याण छुपा हुआ होता है ! न जाने कितनों को उनके द्वारा जीवनदृष्टि मिलती है, शांति मिलती है, आनंद मिलता है, मुक्ति मिलती है !

ईरान में एक ऐसे ही फरीदुद्दीन अत्तार नामक महापुरुष हो गये जिनकी वजह से तुर्क और ईरान का भीषण युद्ध रुक गया था ।

बात उस समय की है जब तुर्क और ईरान के बीच लड़ाई चल रही थी । संत फरीदुद्दीन अत्तार एक दिन घूमते-घूमते तुर्क देश की सीमा के अन्दर चले गये । तुर्कों ने फरीदुद्दीन अत्तार को गिरफ्तार कर लिया और घोषणा कर दी कि हम फरीदुद्दीन अत्तार को फाँसी पर चढ़ा देंगे ।

ईरान के जवानों को जब इस घोषणा का पता चला तब वे बहुत दुःखी हुए और उन्होंने आपस में सभा करके यह निर्णय लिया कि उनके स्थान पर हमारे में से ही कोई जवान फाँसी पर चढ़ जाये ताकि हम फरीदुद्दीन अत्तार जैसे महापुरुष का जीवन बचा सकें । उन्होंने यह संदेश तुर्कों तक पहुँचाया :

''आप हमारे संत फरीदुद्दीन अत्तार को छोड़ दीजिए । यदि आपको हमारे देश के किसी एक नागरिक को फाँसी पर चढ़ाना ही है तो हममें से कोई भी जवान उनकी जगह बलिदान देने के लिए तैयार है ।''

परन्तु उन जवानों का यह प्रस्ताव तुर्कों द्वारा अस्वीकार कर दिया गया । तब ईरान के धनाढ्य लोगों ने कहलवाया :

''फरीदुद्दीन अत्तार के वजन के बराबर हीरे-मोती देने के लिए हम तैयार हैं लेकिन हमारे देश का संतरूपी हीरा हम खोना नहीं चाहते । अतः कृपया हीरे-मोती लेकर आप हमारे महापुरुष फरीदुद्दीन अत्तार को छोड़ दीजिए ।''

धनाढ्यों का यह प्रस्ताव भी तुर्कों द्वारा अस्वीकार कर दिया गया । तब ईरान-नरेश ने सोचा : 'अगर मेरे देश के एक फकीर को मैं नहीं संभाल सका तो खुदा को क्या मुँह दिखाऊँगा ? सेठ तो कई बन जाते हैं, बुद्धिमान और विद्वान भी कई बन जाते हैं लेकिन जहाँ से बुद्धि और विद्या लेने की सत्ता मिलती है वहाँ तक तो कोई विरला ही पहुँच पाता है । जिसने सब संशयों की फाकी कर ली है ऐसे फकीर ही वहाँ पहुँच पाते हैं और ऐसे फकीर इस धरती पर कभी-कबार ही मिल पाते हैं । यदि ऐसे फकीर को हमने नहीं संभाला तो हमने क्या किया ?'

> *फकीर की महिमा को जाने बिना ही तुर्क-नरेश का हृदयपरिवर्तन हो गया तो जो जानकर श्रद्धा-भक्ति से उनके चरणों में बैठते हैं, उनके उपदेशामृत को सुनकर, उनसे मार्गदर्शन पाकर अपने जीवन को ढालते हैं, उनके भाग्य का तो कहना ही क्या है !*

ईरान-नरेश ने संदेश भेजा : ''हे तुर्क-नरेश ! अगर आप चाहें तो फरदुद्दीन अत्तार के बदले में अपना तख्त आपको दे सकता हूँ किन्तु उन्हें आप फाँसी पर न चढ़ायें । मेरी इस बात पर आप अवश्य गौर किजिएगा ।''

तुर्क-नरेश यह संदेश पाकर अत्यंत विस्मय में पड़ गया कि आखिर इस फकीर में ऐसा क्या है कि ईरान के युवक अपनी कुर्बानी देने को तैयार हैं, धनाढ्य हीरे-मोती कुर्बान करने को तैयार हैं और यह ईरान-नरेश तो अपना तख्त तक कुर्बान करने को तैयार है ! यह फकीर एक साधारण-सा आदमी

ही तो है !

मूर्खों को संत साधारण आदमी लगते हैं लेकिन संत के हृदय में अनंत ब्रह्माण्डनायक परमात्मा प्रगट हुआ होता है । ऐसे निर्दोष संतों पर भी यदि कोई दोष लगाना चाहे तो लगा सकता है । संत तो एक ऐसे स्वच्छ वस्त्र की तरह हैं जिस पर जो रंग लगाया जाये वैसा ही दिखता है । इसी प्रकार जो जिस दृष्टि से देखता है उसे संत-महापुरुष वैसे ही दिखाई देते हैं ।

तुर्क-नरेश सुबह-सुबह उस जेल में गया जहाँ फरीदुद्दीन अत्तार को कैद किया गया था । जाकर उसने फरीदुद्दीन अत्तार को सिर से पैर तक और पैर से सिर तक निहारा । शुरूआत में तो उसे दिखा कि यह एक साधारण इन्सान है लेकिन ज्यों-ज्यों निहारता गया त्यों-त्यों उसका मन शांत होता गया ।

नजरों से वे निहाल हो जाते हैं ।
जो फकीरों की निगाहों में आ जाते हैं ॥

सुबह का सात्त्विक वातावरण और फकीर के दर्शन... तुर्क-नरेश पर बरस गई रहमत । कुछ पवित्रता आयी । आखिर निंदक भी तो इन्सान है । देर-सबेर उसकी इन्सानियत भी तो पनपती है । तुर्क-नरेश सोचने लगा : 'मेरा राज्य भी कब तक रहेगा ? आखिर तो इसे भी यहीं छोड़कर कब्रस्तान में जाना पड़ेगा । जब ये लोग फकीर के लिए इतना न्यौछावर कर रहे हैं तो मुझे भी इन्सानियत से काम लेना चाहिए ।' तुर्क-नरेश ने बड़े प्रेम से एक पत्र लिखकर ईरान भेजा : ''हम आपके देश के फरीदुद्दीन अत्तार को लेकर आपसे भेंटवार्ता करें तो कैसा रहेगा ?''

ईरान-नरेश ने जवाब भिजवाया : ''मैंने पलकें बिछा रखी हैं, आपकी रहेमत मानूँगा ।''

दोनों नरेश आपस में गले लग पड़े । युद्ध बंद हो गया । दोनों देश जो लड़कर बरबाद हो रहे थे वे फरीदुद्दीन अत्तार के निमित्त से उस समय बरबादी से बच गये ।

कैसी महिमा है संतों के संग की !

जब फकीर की महिमा को जाने बिना ही तुर्क-नरेश का हृदयपरिवर्तन हो गया तो जो जानकर श्रद्धा-भक्ति से उनके चरणों में बैठते हैं, उनके उपदेशामृत को सुनकर, उनसे मार्गदर्शन पाकर अपने जीवन को ढालते हैं, उनके भाग्य का तो कहना ही क्या है ! देर-सबेर वे तो भगवद्स्वरूप को पा ही लेंगे ।

टूटे फूटे-भाग्य को संत देते हैं जोड़...

❀

भगवान का अवतार भारत में ही क्यों ?

मनुष्य के अंदर एक ऐसी अद्भुत योग्यता है कि उसे जिस वक्त जिस चीज की अत्यंत जरूरत होती है तो वह मनुष्य या तो वहाँ पहुँच जाता है जहाँ उसकी जरूरत पूरी होनेवाली होती है या फिर उसकी जरूरत पूरी करनेवाला कोई व्यक्ति उसके पास पहुँच जाता है । यह प्रकृति का विधान है ।

मुझसे 'वर्ल्ड रिलिजियस पार्ल्यामेन्ट' में पत्रकारों द्वारा पूछा गया कि : ''भारत में ही भगवान के अवतार क्यों होते हैं ? हिन्दुस्तान में ही भगवान क्यों जन्म लेते हैं ? जब सारी सृष्टि भगवान की ही है तो आपके भगवान ने यूरोप में या अमेरिका में अवतार क्यों नहीं लिया ? नानकजी या कबीरजी जैसे महापुरुष इन देशों में क्यों नहीं होते ?''

जैसे जहाँ हरियाली वहाँ बादल और जहाँ बादल वहाँ हरियाली होती है ऐसे ही हमारे यहाँ भक्तिरूपी हरियाली है अतः भगवान भी बार-बार आते हैं बरसने के लिए ।

मैंने उनसे पूछा : ''जहाँ हरियाली होती है वहाँ बादल क्यों आते हैं... और जहाँ बादल होते हैं वहाँ हरियाली क्यों होती है ?''

उन्होंने जवाब दिया : ''बापू ! यह तो प्राकृतिक विधान है ।''

तब मैंने कहा : ''इस बार जब धरती जल से निकली तो सर्व प्रथम कैलास पर्वत निकला और भगवान सांबसदाशिव ने ब्रह्मविद्या का उपदेश दिया, भक्ति और

ज्ञान का प्रचार किया तो यहाँ हिन्दुस्तान में भक्त पैदा हुए । जहाँ भक्त आये वहाँ भगवान की माँग हुई तो भगवान भी आये और जहाँ भगवान आये वहाँ भक्तों की भक्ति पुष्ट हुई । अत: जैसे जहाँ हरियाली वहाँ बादल और जहाँ बादल वहाँ हरियाली होती है ऐसे ही हमारे यहाँ भक्तिरूपी हरियाली है अत: भगवान भी बार-बार आते हैं बरसने के लिए ।''

दुनिया के कई देशों में मैं घूमा और कई जगह मेरे प्रवचन हुए लेकिन भारत जितनी तादाद में और शांति से किसी देश के लोग सत्संग सुन पाये हों ऐसा मैंने आज तक कहीं भी, किसी भी देश में नहीं देखा । फिर चाहे 'वर्ल्ड रिलिजियस पार्ल्यामेन्ट' ही क्यों न हो । जिसमें विश्वभर के वक्ता आये वहाँ ६०० बोलनेवाले और १५०० सुननेवाले अर्थात् प्रत्येक वक्ता के पीछे केवल ढाई श्रोता ! यहाँ भारत में तो ऐसे कई 'वर्ल्ड रिलिजियस पार्ल्यामेन्ट' रोज बनते रहते हैं और इसका कारण है कि आज भी भारत में हरिकथा के रसिक हजारों-हजारों, लाखों-लाखों हैं । घर-घर में रामायण और गीता का पाठ होता है । भगवत्प्रेमी संतों के सत्संग-प्रवचन में जाकर, उनसे ज्ञान-ध्यान प्राप्त कर लोग अपना जीवन धन्य कर लेते हैं । अत: जहाँ-जहाँ भक्त और भगवत्कथाप्रेमी होते हैं वहाँ-वहाँ भगवान और संतों का प्रागट्य होता ही है ।

सत्संग सहज में ही असंत को संत बना देता है । असाधक को साधक बना देता है, अभक्त को भक्त बना देता है, अज्ञानी के दिल में ज्ञान भर देता है और भगवान से खाली दिल में भगवान भर देता है ।

सत्संग धन से बड़ा होता है, सत्संग रिद्धि-सिद्धि से भी बड़ा होता है, यह अष्टसिद्धियों से भी बड़ा होता है... अरे ! सत्संग तो ईश्वर के ऐश्वर्य से भी बड़ा होता है ।

हमें शिकायत है कि...

श्रीमान व्यवस्थापक महोदयजी
कार्यालय 'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति, अहमदाबाद ।

विषय :'ऋषि प्रसाद' पत्रिका डाक द्वारा नियमित न मिलने बाबत ।

निवेदन है कि श्री योग वेदान्त सेवा समिति अहमदाबाद से प्रकाशित मासिक पत्रिका 'ऋषि प्रसाद' नियमित प्राप्त नहीं होती है । कभी किसी सदस्य की पत्रिका और कभी किसी अन्य सदस्य की पत्रिका पोस्ट विभाग द्वारा गोल कर दी जाती है जिससे सदस्यों को बड़ी ही परेशानी होती है ।

अतएव श्रीमानजी से निवेदन है कि इस हेतु पोस्ट विभाग को लिखा जावे । एक बार दस पत्रिकाएँ विदिशा पोस्ट ऑफिस में एक बाबूजी से मैंने स्वयं पकड़कर दुबारा बुक कराई थीं ।

इस व्यवस्था के सुधार हेतु कृपया डाक विभाग से सम्पर्क स्थापित करने का कष्ट करें ।

आपका ही
(हस्ताक्षर)
नाथूसिंह रघुवंशी
दिनांक : १८-२-९६
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
अटारी खेजड़ा, जि. विदिशा (म. प्र.).

कथा प्रसंग

मृत्यु अटल है

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

तेरह सौ साल पहले की यह घटित घटना है । एक जाना-माना जौहरी कुछ हीरे-जवाहरात आदि लेकर रोम-नरेश के खास वजीर के पास पहुँचा । वजीर से उस जौहरी ने कहा : ''विश्व में कुछ दुर्लभ वस्तुएँ होती हैं, उनमें से कुछ दुर्लभ हीरे-जवाहरात मेरे पास हैं । मैं कोई साधारण सौदागर नहीं हूँ... ।''

वजीर वेदांती रहा होगा । उस वजीर ने कहा : ''तुम्हारे ये दुर्लभ हीरे-जवाहरात हम राजा साहब को अवश्य दिखाएँगे लेकिन राजा साहब के पास जाने से पहले जरा तुम मेरे साथ चलो ।''

> ''तुम्हारे ये दुर्लभ हीरे-जवाहरात हम राजा साहब को अवश्य दिखाएँगे लेकिन राजा साहब के पास जाने से पहले जरा तुम मेरे साथ चलो ।''

यह कहकर वजीर उस जौहरी को एक ऐसी जगह ले गया जहाँ रत्नों एवं मोतियों से सजा हुआ एक सुन्दर खण्ड था । उसके खंभों पर भी बहुमूल्य रत्न जड़े हुए थे । कुछ समय बाद करीब चारसौ सैनिक उस जगह पर आये और वहाँ सलामी देकर, रोमन भाषा में कुछ कहकर रवाना हो गये ।

> कुछ युवान ललनाएँ वहाँ आयीं । सभी रूप-लावण्य से भरपूर, कोमल अंगोंवाली एवं अलंकारों से सुसज्ज थीं । वे सबकी सब भी आँसू बहाते हुए रोमन भाषा में कुछ कहकर वापस चली गयीं ।

उनके जाने के पश्चात् कुछ पंडित वहाँ आये और वे भी रोमन भाषा में कुछ बोलकर रवाना हो गये ।

फिर देखते-ही-देखते समाज के कुछ बुजुर्ग, कुछ अग्रगण्य लोग आये, कुछ बोले और चले गये ।

उनके जाने के बाद कुछ युवान ललनाएँ वहाँ आयीं । सभी रूप-लावण्य से भरपूर, कोमल अंगोंवाली एवं अलंकारों से सुसज्ज थीं । वे सबकी सब भी आँसू बहाते हुए रोमन भाषा में कुछ कहकर वापस चली गयीं ।

इधर जौहरी आश्चर्य के समुद्र में गोते खाने लगा : 'यह मैं क्या देख रहा हूँ ? सब यहाँ आते हैं, बोलते-बोलते उनका कंठ भर आता है और आँसू बहाकर चले जाते हैं ! आखिर यह सब क्या है ?'

उसी समय रोम-नरेश स्वयं वहाँ आये । सिर झुकाया । रूँधे कंठ, भीगी आँखों एवं व्यथित चित्त से निहारते हुए कुछ कहकर वे चले गये ।

अब तो उस जौहरी की हैरानी का कोई पार ही न रहा । जब उससे न रहा गया तो वह वजीर से पूछ ही बैठा : ''यह मैं क्या देख रहा हूँ ?''

वजीर बोला : ''इस रत्न-जड़ित खंभों के बीच जो कब्र है वह यहाँ के राजकुमार की कब्र है । राजा का इकलौता पुत्र युवावस्था में ही मर गया था । यह उसीकी कब्र है ।

सबसे पहले तुमने कुछ सैनिकों को सलामी मारकर जाते देखा था । उन सैनिकों ने कहा था : 'राजकुमार ! अगर हमारा सैन्यबल तुम्हारी मौत को टाल सकता तो हम जरूर प्रयास करते लेकिन मृत्यु के आगे हमारा सैन्यबल कोई कीमत नहीं रखता । हम लाचार हैं, युवराज ! नहीं तो तुम्हें इस तरह मिट्टी में न

मिलने देते।' इस प्रकार सैनिक अपनी विवशता बताकर वापस गये।

फिर राज्य के पंडितों ने आकर कहा : 'हमारी विद्वत्ता एवं पंडिताई से अगर मृत्यु से कोई बच सकता तो हे युवराज ! सबसे पहले हम तुम्हें ही बचाते। हमारी विद्वत्ता और पंडिताई में अगर मृत्यु को जीतने का कोई उपाय होता तो हम तुम्हें नहीं मरने देते लेकिन हम विवश थे।'

उसके बाद राज्य के अग्रगण्यों एवं बुजुर्गों ने आकर कहा : 'युवराज ! हमारी दुआ में अगर सामर्थ्य होता तो हम तुम्हें अमर बना देते। हमारी दुआओं से यदि मृत्यु रुक सकती तो हम तुम्हें दुआओं का ऐसा कवच पहना देते कि तुम्हें मुर्दा होकर जमीन में न सड़ना पड़ता किन्तु हम मजबूर थे, युवराज !'

फिर उन ललनाओं ने आकर कहा : 'हमारे रूप-लावण्य से, रत्नजड़ित अलंकारों से भी यदि मृत्यु को टाला जाता तो हम सब मिलकर भी तुम्हें बचा लेतीं, किन्तु हे युवराज ! हमारा रूप-लावण्य भी अंत में किसी काम का नहीं रहता। हमारे ये रत्नजड़ित अलंकार भी अंत में किसी काम के नहीं रहते। मृत्यु अनिवार्य है, राजकुमार। हम लाचार हैं, नहीं तो हम तुम्हें इस तरह कब्र में न पड़ने देतीं। हमारा रूप-लावण्य एवं सौन्दर्य भी किसीको मौत से नहीं बचा सकता।'

वे लोग अभागे हैं जो रूप-लावण्य के पीछे सारी जिंदगी बरबाद कर देते हैं और मालिक को भुला देते हैं।

आखिर में रोम-नरेश स्वयं आये और कहने लगे : 'पुत्र ! यदि रोम के सैनिकों, पंडितों, बुजुर्गों एवं समस्त ललनाओं को तो क्या, रोम की पूरी संपत्ति लगाकर भी यदि तेरी मृत्यु टाली जा सकती तो मैं अपना सारा वैभव, अपना पूरा सामर्थ्य दाँव पर लगाकर तुझे बचा लेता। पुत्र ! इस मृत्यु से बचाने के लिए मैं तुझ पर रोम का पूरा तख्त न्यौछावर कर सकता था लेकिन मैं लाचार था।'

जौहरी ! जिसको बचाने के लिए एक राजा अपना पूरा राज्य तक न्यौछावर कर सकता है किन्तु उसे मृत्यु के मुख से नहीं बचा सकता। क्यों ? क्योंकि मृत्यु अवश्यंभावी है। सब कुछ नाशवान है, क्षणभंगुर है। अब तुम्हीं बताओ कि तुम्हारे ये दुर्लभ हीरे-जवाहरात किस काम के हैं ?''

कितना सनातन सत्य है ! दुनिया की सारी सुविधाएँ जिसके पास थीं ऐसे रोम-नरेश का पुत्र उनके देखते-देखते चल बसा। एक राजा या प्रधानमंत्री दुनिया की सब सुविधाएँ और सामग्री एकत्रित कर सकता है किन्तु मृत्यु से किसीको नहीं बचा सकता।

जिससे बार-बार जन्म-मरण के चक्र में न फँसें- ऐसी विद्या अर्थात् ब्रह्मविद्या को जो पा लेता है वह मृत्यु से सदा के लिए बच जाता है। बाकी न तो तख्त मृत्यु से बचा सकता है, न विद्वत्ता, न ही सौन्दर्य या सैन्यबल मृत्यु से बचा सकता है। मृत्यु से केवल वही बच पाता है जो परमात्म-प्राप्ति के रास्ते जाता है, परमात्म-ज्ञान के रास्ते जाता है। जो उस परमेश्वर को प्रेम करते-करते उसीमें ही लीन हो जाता है उसे जन्म-मृत्यु के चक्र में नहीं भटकना पड़ता।

> *"इस रत्नजड़ित खंभों के बीच जो कब्र है वह यहाँ के राजकुमार की कब्र है। राजा का इकलौता पुत्र युवावस्था में ही मर गया था यह उसीकी कब्र है।"*

> *जिससे बार-बार जन्म-मरण के चक्र में न फँसें- ऐसी विद्या अर्थात् ब्रह्मविद्या को जो पा लेता है वह मृत्यु से सदा के लिए बच जाता है। बाकी न तो तख्त मृत्यु से बचा सकता है न विद्वत्ता, न ही सौन्दर्य या सैन्यबल मृत्यु से बचा सकता है।*

> *शरीर की मौत हो जाना कोई बड़ी बात नहीं, लेकिन श्रद्धा की मौत हुई तो समझो सर्वनाश हुआ।*

नेत्ररोगों के लिये चाक्षुषोपनिषद्

ॐ अस्याश्चाक्षुषी विद्याया: अहिर्बुधन्य ऋषि: । गायत्री छंद: । सूर्यो देवता । चक्षुरोगनिवृत्तये जपे विनियोग: ।

ॐ इस चाक्षुषी विद्या के ऋषि अहिर्बुधन्य हैं । गायत्री छंद है । सूर्यनारायण देवता हैं । नेत्ररोग की निवृत्ति के लिये इसका जप किया जाता है । यही इसका विनियोग है ।

ॐ चक्षु: चक्षु: तेज स्थिरो भव । मां पाहि पाहि । त्वरितं चक्षुरोगान् शमय शमय । मम जातरूपं तेजो दर्शय दर्शय । यथा अहं अन्धो न स्यां तथा कल्पय कल्पय । कल्याणं कुरु कुरु ।

यानि मम पूर्वजन्मोपार्जितानि चक्षु: प्रतिरोधकदुष्कृतानि सर्वाणि निर्मूलय निर्मूलय । ॐ नम: चक्षुस्तेजोदात्रे दिव्याय भास्कराय । ॐ नम: करुणाकराय अमृताय । ॐ नम: सूर्याय । ॐ नम: भगवते सूर्यायाक्षि तेजसे नम: ।

खेचराय नम: । महते नम: । रजसे नम: । तमसे नम: । असतो मा सद्गमय । तमसो मा ज्योतिर्गमय । मृत्योर्मा अमृतं गमय । उष्णो भगवांछुचिरूप: । हंसो भगवान शुचिरप्रति-प्रतिरूप: ।

य इमां चाक्षुष्मती विद्यां ब्राह्मणो नित्यमधीते न तस्याक्षिरोगो भवति । न तस्य कुले अन्धो भवति ।

अष्टौ ब्राह्मणान् सम्यग् ग्राहयित्वा विद्या-सिद्धिर्भवति । ॐ नमो भगवते आदित्याय अहोवाहिनी अहोवाहिनी स्वाहा ।

ॐ हे सूर्यदेव । आप मेरे नेत्रों में, नेत्रतेज के रूप में स्थिर हों । आप मेरा रक्षण करो, रक्षण करो । शीघ्र मेरे नेत्ररोग का नाश करो, नाश करो । मुझे आपका स्वर्ण जैसा तेज दिखा दो, दिखा दो । मैं अन्धा न होऊँ इस प्रकार का उपाय करो, उपाय करो । मेरा कल्याण करो, कल्याण करो । मेरी नेत्र-दृष्टि के आड़े आनेवाले मेरे पूर्वजन्मों के सर्व पापों को नष्ट करो, नष्ट करो । ॐ (सच्चिदानंदस्वरूप) नेत्रों को तेज प्रदान करनेवाले, दिव्यस्वरूप भगवान भास्कर को नमस्कार है । ॐ करुणा करनेवाले अमृतस्वरूप को नमस्कार है । ॐ भगवान सूर्य को नमस्कार है । ॐ नेत्रों का प्रकाश होनेवाले भगवान सूर्यदेव को नमस्कार है । ॐ आकाश में विहार करनेवाले भगवान सूर्यदेव को नमस्कार है । ॐ रजोगुणरूप सूर्यदेव को नमस्कार है । अन्धकार को अपने अन्दर समा लेनेवाले तमोगुण के आश्रयभूत सूर्यदेव को मेरा नमस्कार है ।

हे भगवान ! आप मुझे असत्य की ओर से सत्य की ओर ले चलो । अन्धकार की ओर से प्रकाश की ओर ले चलो । मृत्यु की ओर से अमृत की ओर ले चलो ।

उष्णस्वरूप भगवान सूर्य शुचिस्वरूप हैं । हँसस्वरूप भगवान सूर्य शुचि तथा अप्रतिरूप हैं । उनके तेजोमय रूप की समानता करनेवाला दूसरा कोई नहीं है ।

जो कोई इस चाक्षुष्मती विद्या का नित्य पाठ करता है उसको नेत्ररोग नहीं होते हैं, उसके कुल में कोई अन्धा नहीं होता है । आठ ब्राह्मणों को इस विद्या का दान करने पर यह विद्या सिद्ध हो जाती है ।

चाक्षुषोपनिषद् की पठन-विधि

श्रीमत् चाक्षुषोपनिषद् यह सभी प्रकार के नेत्ररोगों पर भगवान सूर्यदेव की रामबाण उपासना है । इस अनुभूत मंत्र से सभी नेत्ररोग आश्चर्यजनक रीति से अत्यंत शीघ्रता से ठीक होते हैं । सैकड़ों साधकों ने इसका प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त किया है ।

सभी नेत्र रोगियों के लिये चाक्षुषोपनिषद् प्राचीन ऋषि-मुनियों का अमूल्य उपहार है । इस गुप्त धन का स्वतंत्र रूप से उपयोग करके अपना कल्याण करें ।

शुभ तिथि के शुभ नक्षत्रवाले रविवार को इस उपनिषद् का पठन करना प्रारंभ करें। पुष्य नक्षत्र सहित रविवार हो तो वह रविवार कामनापूर्ति हेतु पठन करने के लिये सर्वोत्तम समझें। प्रत्येक दिन चाक्षुषोपनिषद् का कम से कम बारह बार पाठ करें। बारह रविवार (लगभग तीन महीने) पूर्ण होने तक यह पाठ करना होता है। रविवार के दिन भोजन में नमक नहीं लेना चाहिये।

प्रातःकाल उठें। स्नान आदि करके शुद्ध होवें। आँखें बन्द करके सूर्यदेव के सामने खड़े होकर भावना करें कि : 'मेरे सभी प्रकार के नेत्ररोग श्री सूर्यदेव की कृपा से ठीक हो रहे हैं। लाल चन्दनमिश्रित जल ताँबे के पात्र में भरकर सूर्यदेव को अर्घ्य दें। संभव हो तो षोड़शोपचार विधि से पूजा करें। श्रद्धा-भक्तियुक्त अन्तःकरण से नमस्कार करके 'चाक्षुषोपनिषद्' का पठन प्रारंभ करें।

इस उपनिषद् का शीघ्र गति से लाभ लेना हो तो निम्न वर्णित विधि अनुसार पठन करें :

नेत्रपीड़ित श्रद्धालु साधकों को प्रातःकाल जल्दी उठना चाहिये। स्नानादि से निवृत्त होकर पूर्व की ओर मुख करके आसन पर बैठें। अनार की डाल की लेखनी व हल्दी के घोल से कांसे के बर्तन में नीचे वर्णित बत्तीसा यंत्र लिखें :

८	१५	२	७
६	३	१२	११
१४	९	८	१
४	५	१०	१३

मम चक्षुरोगान् शमय शमय।

बत्तीसा यंत्र लिखे हुए इस कांसे के बर्तन को ताम्बे के चौड़े मुँहवाले बर्तन में रखें। उसके चारों ओर घी के चार दीपक जलावें और गंध-पुष्प आदि से इस यंत्र की मनोभाव से पूजा करें। पश्चात् हल्दी की माला से **'ॐ ह्रीं हंसः'** इस बीजमंत्र की छः माला जपें। पश्चात् 'चाक्षुषोपनिषद्' का बारह बार पाठ करें। अधिक बार पढें तो अति उत्तम। 'उपनिषद्' का पाठ होने के उपरान्त **'ॐ ह्रीं हंसः'** इस बीजमंत्र की पाँच माला फिर से जपें। इसके पश्चात् सूर्य को श्रद्धापूर्वक अर्घ्य देकर साष्टांग नमस्कार करें। 'सूर्यदेव की कृपा से मेरे नेत्ररोग शीघ्रातिशीघ्र नष्ट होंगे'- ऐसा विश्वास होना चाहिये।

इस पद्धति से 'चाक्षुषोपनिषद्' का पाठ करने पर इसका आश्चर्यजनक, अलौलिक प्रभाव तत्काल दिखता है।

अनेक ज्योतिषाचार्यों ने, प्रकांड पंडितों ने व शास्त्रज्ञों ने इस उपनिषद् के अलौकिक प्रभाव का प्रत्यक्ष अनुभव किया है।

❀

ग्रीष्मचर्या

ग्रीष्म ऋतु में हवा लू के रूप में तेज लपट की तरह चलती है जो बड़ी कष्टदायक और स्वास्थ्य के लिये हानिप्रद होती है। अतः इन दिनों में पथ्य आहार-विहार का पालन करके स्वस्थ रहें।

पथ्य आहार : सूर्य की तेज गर्मी के कारण हवा और पृथ्वी में से सौम्य अंश (जलीय अंश कम हो जाता है। अतः सौम्य अंश की रखवाली के लिये मधुर, तरल, हल्के, सुपाच्य, जलीय, ताजे, शीतल तथा स्निग्ध गुणवाले पदार्थों का सेवन करना चाहिये। जैसे- ठण्डाई, घर का बनाया हुआ सत्तू ताजे (कच्चे) दूध में पानी और शक्कर मिलाकर पीवें, पानी में नीबू निचोड़कर बनाई हुई शिकंजी, खीर, दूध, कैरी, मौसम्बी, अनार, अंगूर, घी, ताजी चपाती, छिलकेवाली मूंग की दाल, लौकी, गिल्की चने की भाजी, चौलाई, परवल, केले की सब्जी, तरबूज के छिल्कों की सब्जी, हरी ककड़ी, हरा धनिया, पोदीना, कच्चे आम को भूनकर बनाया गया मीठा पना, गुलकन्द, पेठा आदि खाना चाहिये।

इस ऋतु में हरड़े का सेवन गुड़ के साथ समान मात्रा में करना चाहिये जिससे वात या पित्त का प्रकोप नहीं होता है। इस ऋतु में प्रातः पानी-प्रयोग अवश्य

(शेष पृष्ठ ४ पर)

जन्मोत्सव : भारतीय अभिगम

आज की भौतिक पाश्चात्य अंधानुकरण की परंपरा तो ऐसी चल पड़ी है कि जितने वर्ष उम्र हो उतनी मोमबत्तियाँ केक में लगायी जाती हैं, उनको जलाया जाता है, फिर फूँका जाता है। उस फूँक के साथ केक में व्यक्ति के थूक के कण पड़ते हैं और वही फूँका-थूका केक सभी बाँटकर खाते हैं। जैसा अन्न-वैसा मन। अशुद्ध खानपान से अशुद्ध मन, अशुद्ध मन से अशुद्ध विचार, अशुद्ध विचारों से अशुद्ध क्रिया होती है जिसके फलस्वरूप परिवार में अशांति, कलह, उद्वेग उत्पन्न होता है।

भारतीय संस्कृति में जन्मोत्सव दिखने में सामान्य, किन्तु प्रभाव में असामान्य संस्कारप्रद है, उसे ठीक तरह से मनाया जाये तो प्रसुप्त आनंद और उल्लास जगेगा।

जन्मदिन कैसे मनाना चाहिए ?

जितने वर्ष की आयु हो, उतने दीपक स्वस्तिक आदि सुन्दर आकारों में सजायें। आपके मित्र एक-एक, दो-दो दीपक जलायें तथा आनेवाले वर्ष का एक बड़ा दिया बड़े-बूढ़े सज्जन-श्रेष्ठ व्यक्ति से प्रगटावें। भावना करें और करवायें कि आनेवाला वर्ष बीतनेवाले वर्ष की अपेक्षा ज्यादा प्रकाशमय, ज्ञानमय, तेजमय और ओजमय हो। पृथ्वी तुम्हारे लिए सुखद हो। जल तुम्हारे लिए सुखद हो। मित्र तुम्हारे लिए सुखद हों। ऐसी भावना करते हुए उपस्थित मित्रगण हाथ में थोड़े चावल और पुष्पों से आपको शुभ कामनाएँ दें। जीवन का प्रत्येक वर्ष दीपक के समान प्रकाशवान रहे, ऐसी भावना करें।

दीपक की ज्योति ऊर्ध्वगामी होती है तथा दीपक स्वयं तिल-तिल जलकर अन्धकार में प्रकाश उत्पन्न करता है। भला इस दीपक को जन्म-दिवसोत्सव के शुभ दिन पर बुझाया कैसे जा सकता है ? हमारी संस्कृति में तो हर शुभ अवसर पर दीपक जलाया जाता है, प्रत्येक मांगलिक कार्य में दीपक की पूजा की जाती है, इसलिए ज्योति को बुझाकर अपने-आपको अन्धकार की ओर कौन ले जाना चाहेगा ?

जन्मदिन की बधाई हो... आपका नया वर्ष मंगलमय बने यही प्रभु से प्रार्थना...

जन्मदिवस पर आशीर्वाद

समास्त्वाऽग्न ऋतवो वर्द्धयन्तु
संवत्सराऽऋषयो यानि सत्या।
सं दिव्येन दीदिहि रोचनेन
विश्वा आ भाहि प्रदिशश्चतस्त्रः ॥

(यजु० २७.१)

'जन्म दिवस पर वेद का आशीर्वाद है कि कठिनाइयाँ तेरे जीवन का विकास करें और तुझे प्रसाद प्रदान करें। वर्ष की ऋतुएँ अनुकूलता के साथ तेरा संवर्धन करें। वर्ष के कालयवनों के समान तेरा जीवन वर्षानुवर्ष सम्यक् सतत प्रगतिशील रहे। ऋषि तेरा संवर्धन करें। सबके सत्य तेरे जीवन को सत्त्वसम्पन्न बनाएँ। तू दिव्य रोचन से सम्यक् दीप्त हो और अपनी दिव्य सुन्दरताओं से सब प्रदिशाओं को जगमगा।

(पृष्ठ ३२ का शेष)

श्रवण किया जिसमें श्रीमती वसुंधरा राजे (सांसद-झालावाड़ क्षेत्र), श्री दाऊदयाल जोशी (सांसद-कोटा क्षेत्र), श्री बी. के. गोयल (डिप्टी कमिश्नर इनकमटैक्स-कोटा रेन्ज), श्री श्रीमंत पांडे (जिला कलेक्टर-कोटा), श्री ताराचंद सारण (जिला कलेक्टर-बाँरा), श्री पहाड़ियाजी (अतिरिक्त जिला कलेक्टर), श्री आर. एन. वर्मा (डिप्टी चीफ इन्स्पेक्टर ऑफ फेक्टरीज), श्री चाचान साहब (जिला न्यायाधीश-कोटा), श्री बंसल साहब (न्यायाधीश-कोटा), श्री जे. के. चंडवाणी (आयकर अधिकारी-बाँरा), श्री दधिच साहब (जिला परिषद् अधिकारी) आदि मुख्य थे। इसके अलावा विभिन्न पार्टियों के अन्य नेताओं ने भी इस शुभ अवसर पर पूज्य बापू के दर्शन व सत्संग-प्रवचन का लाभ लिया।

पू. बापू के आगामी सत्संग कार्यक्रम

हरिद्वार में ध्यान योग वेदान्त शक्तिपात साधना शिविर : दिनांक : ३० मई १९९६ से।

गुरुकृपा से नौकरी में लाभ

मार्च १९८६ चेटीचंड ध्यान योग शिविर अहमदाबाद में मुझे प्रात:स्मरणीय पूज्यपाद संत श्री आसारामजी महाराज से मंत्रदीक्षा लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ । उसके पूर्व मेरे मन में गुरु अथवा दीक्षा के प्रति उतना आदर नहीं था लेकिन दीक्षा के दिन ही सायंकाल के सत्संग के ध्यान में मुझ अकिंचन पर ऐसी शक्तिपात-वर्षा हुई, जिसका वर्णन करना असंभव है । तत्पश्चात् तो अहमदाबाद आश्रम के सभी ध्यान योग शिविरों का लाभ लेता हूँ । व्यावहारिक जीवन में पूज्यश्री के सान्निध्य में आने के बाद कई छोटे-मोटे अनुभव हुए हैं और प्रतिदिन की घटनाओं में पूज्य बापू रक्षा करते ही रहते हैं ।

मैं राजस्थान रोड़वेज के भीलवाड़ा डिपो में कनिष्ठ लिपिक के पद पर कार्यरत हूँ । सन् १९८४ में एक केस में मेरी तीन स्थायी वेतनवृद्धियाँ (इन्क्रीमेन्ट) रोक ली गई थीं, जिसमें पूरे सेवाकाल में लगभग एक लाख रूपये की हानि होती । मैंने १९८६ में लेबर कोर्ट में केस किया तथा दीक्षाप्राप्ति के पश्चात् पूज्य बापू से प्रार्थना की, बड़दादा की परिक्रमा कर मनौती मानी ।

मेरे ही जैसा एक और केस हमारे स्टॉफवाले का भी था । केस जयपुर जलेबी चौक ऑफीस से लेबर कोर्ट में 'रेफर' होना था । उस समय यूनियन के लीडर ने कहा कि 'वहाँ कुछ देना पड़ेगा । तभी फाईल आगे खिसकेगी, अन्यथा नहीं ।'

मैंने कहा कि 'दे देंगे ।' मेरे साथवाले ने तो उसे पैसे दे दिये लेकिन मैं उसे समय पर पैसे नहीं दे सका । फिर भी पूज्य बापू की ऐसी कृपा हुई कि जिसने पैसे दिये उसका केस वहीं 'रिजेक्ट' हो गया और मेरा केस 'रेफर' हो गया । कोर्ट से मैं केस भी जीत गया तथा १९९१ में मुझे तीनों इन्क्रीमेन्ट एरियर सहित मिले, जिसमें मुझे १८००० रूपयों का नगद लाभ हुआ । मैंने पूज्य बापू के दर्शन तथा बड़दादा की परिक्रमा करके अपनी मनौती पूर्ण की ।

सच्ची श्रद्धा और भक्तिपूर्वक पूज्य बापू एवं आश्रमों पर पूज्य बापू की शक्तिपात-वर्षा से जागृत कल्पवृक्षों के सम्मुख की गई मनोकामनाएँ अवश्य ही पूर्ण होती हैं । कलियुग में ईश्वर के अस्तित्व का इससे अधिक और क्या प्रमाण हो सकता है ?

- गौरीशंकर पारीक
कनिष्ठ लिपिक, राजस्थान परिवहन निगम,
भीलवाड़ा आगार ।

व्यक्ति जितना नि:स्वार्थ होता है उतनी उसकी सुषुप्त जीवनशक्ति विकसित होती है । आदमी जितना स्वार्थी होता है उतनी उसकी योग्यताएँ कुण्ठित हो जाती हैं । अपने अहं को पोसने के लिए आदमी जितना काम करता है उतना ही वह अपनी क्षमताएँ क्षीण करता है । श्रीहरि को प्रसन्न करने हेतु जितना कार्य करता है उतनी उसकी क्षमताएँ विकसित होती हैं ।

❀

जो बीत गया उसको भुला दो । जो चल रहा है उसको हँसकर बीतने दो । जो आयेगा उसकी चिन्ता मत करो । आज तुम अपने आत्मा में डट जाओ । कल तुम्हारे लिए सुन्दर आयेगा ।

संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित विद्यार्थियों के लिये राहत दर से

प्रेरणादायी नोटबुक

समस्त विद्यार्थियों, अभिभावकों, शालाओं के आचार्य एवं शिक्षक भाइयों, छात्रालयों के अधीक्षकों, श्री योग वेदान्त सेवा समिति के सदस्यों तथा 'ऋषि प्रसाद' के सेवाभावी एजेन्ट भाइयों एवं स्नेही पाठकों को अत्यधिक हर्ष के साथ स्मरण कराया जाता है कि प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी पूज्य बापू के पावन संदेशों से युक्त, पृष्ठों तथा विभिन्न प्रेरणादायी रंगीन चित्रों से आकर्षक डिजाइनों में, लेमिनेशन से सुसज्ज मुख्य पृष्ठों से युक्त सुपर डीलक्स क्वालिटी के कागज पर निर्मित की गई, विद्यार्थियों के लिये प्रत्येक पृष्ठ पर दिव्य जीवन के लिये प्रेरणा, शौर्य, साहस, उत्साह एवं अनुपम शक्ति का संचार करने में सहायक हिन्दी तथा गुजराती भाषा में सुवाक्यों से युक्त नोटबुक एवं १०० और २०० पृष्ठवाली सुपर डीलक्स फुलस्केप नोटबुक (Long Note Book) तैयार हो गई हैं ।

अपने-अपने क्षेत्रों मे विद्यार्थी भाई-बहनों को इन प्रेरणादायी राहत दर की नोटबुकों (कापियों) का अधिक से अधिक मात्रा में लाभ मिल सके, इस हेतु एडवान्स बुकिंग करवाने तथा माल प्राप्त करने के लिये तुरन्त सम्पर्क करें :

श्री योग वेदान्त सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अहमदाबाद-३८०००५
फोन : ७४८६३१०, ७४८६७०२.

नोट : संस्थाओं को थोक खरीदी करने के लिये अपना लेटरहेड अहमदाबाद आश्रम में प्रस्तुत करना अनिवार्य है । माल स्टॉक में होगा तब तक मिलेगा ।

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों एवं एजेन्ट बन्धुओं से अनुरोध

कृपया ध्यान दें : गत अंक ४० से द्विमासिक संस्करण का सदस्य शुल्क लेना बंद किया गया है । (१) 'ऋषि प्रसाद' की सदस्यता के लिए नये सदस्यता शुल्क के अनुसार भेजे गये मनीऑर्डर/ड्राफ्ट ही स्वीकार किये जाएँगे, पुरानी दर के नहीं । सदस्यता शुल्क के नये दर इस प्रकार हैं : भारत, नेपाल व भूटान में **वार्षिक : रू. ५०. आजीवन : रू. ५००**
(२) अपनी सदस्यता का नवीनीकरण कराते समय मनीऑर्डर फार्म पर 'संदेश के स्थान' पर 'ऋषि प्रसाद' के लिफाफे पर आया हुआ आपके पते वाला लेबल चिपका दें । (३) 'पाने वाले का पता' में 'ऋषि प्रसाद सदस्यता हेतु' अवश्य लिखें । (४) पते में किसी भी प्रकार के परिवर्तन की सूचना प्रकाशन तिथि से एक माह पूर्व भिजवावें अन्यथा परिवर्तन अगले अंक से प्रभावी होगा । (५) जिन सदस्यों को पोस्ट द्वारा अंक मिलता है उनको विनंती है कि अगर आपको अंक समय पर प्राप्त न हो तो पहले अपनी नजदीकवाली पोस्ट ऑफिस में ही पूछताछ करें । क्योंकि अहमदाबाद कार्यालय से सभी को समय पर ही अंक पोस्ट किये जाते हैं । पोस्ट ऑफिस में तलास करने पर भी अंक न मिले तो उस महीने की २० तारीख के बाद अहमदाबाद कार्यालय को जानकारी दें । (६) 'ऋषि प्रसाद' कार्यालय से पत्रव्यवहार करते समय कार्यालय के पते के ऊपर के स्थान में संबंधित विभाग का नाम अवश्य लिखें । ये विभिन्न विभाग इस प्रकार हैं :

(A) अनुभव, गीत, कविता, भजन, संस्था समाचार, फोटोग्राफ्स एवं अन्य प्रकाशन योग्य सामग्री 'सम्पादक-ऋषि प्रसाद' के पते पर प्रेषित करें । (B) पत्रिका न मिलने तथा पते में परिवर्तन हेतु 'व्यवस्थापक-ऋषि प्रसाद' के पते पर संपर्क करें । (C) साहित्य, चूर्ण, कैसेट आदि प्राप्ति हेतु 'श्री योग वेदान्त सेवा समिति के पते पर संपर्क करें । (D) साधना संबंधी मार्गदर्शन हेतु 'साधक विभाग' पर लिखें । (E) स्थानीय समिति की मासिक रिपोर्ट, सत्प्रवृत्ति संचालन की जानकारी एवं समिति से संबंधित समस्त कार्यों के लिये 'अखिल भारतीय योग वेदान्त सेवा समिति' के पते पर लिखें । (F) स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्त प्रकार के पत्रव्यवहार 'वैद्यराज, सांई लीलाशाहजी उपचार केन्द्र, संत श्री आसारामजी आश्रम, वरीयाव रोड़, जहाँगीरपुरा, सूरत (गुजरात) के पते पर करें । (७) आप जो राशि भेजें वह इन विभागों के मुताबिक अलग-अलग मनीऑर्डर या ड्राफ्ट से ही भेजें । अलग-अलग विभाग की राशि एक ही मनीऑर्डर या ड्राफ्ट में कभी न भेजें ।

संस्था-समाचार

ग्वालियर : दिनांक २८ से ३१ मार्च तक ग्वालियर (म.प्र.) के फूलबाग मैदान पर पूज्यश्री के पावन सान्निध्य में गीता-भागवत सत्संग-समारोह का भव्य आयोजन हुआ जिसमें हजारों भक्तों के साथ अनेकों राजनेताओं एवं सामाजिक कार्यकर्त्ताओं ने भी लगातार चार दिन तक सत्संग-सरिता में अवगाहन किया ।

दिनांक १ अप्रैल को पूज्य बापू वायुयान द्वारा दिल्ली पहुँचे ।

दिल्ली : भारत की राजधानी के ऐतिहासिक स्थल लाल किला मैदान में दिनांक ४ से ९ अप्रैल १९९६ तक द्वितीय विश्वशांति सत्संग-समारोह संपन्न हुआ । सिटी केबलों द्वारा पूज्य बापू के इस सत्संग-समारोह का सीधा प्रसारण करने पर करीब बीस लाख लोगों ने लाभ उठाया । यह आश्चर्यजनक ही है कि भीड़भाड़ और शोरगुलवाले इस इलाके में प्रतिदिन जितनी देर सत्संग चलता, केवल पूज्यश्री की ही वाणी गूँजती रहती थी । उनके श्रीमुख से निःसृत पावन अमृतवाणी के अलावा पांडाल में कुछ और सुनाई नहीं देता था ।

इस छः दिवसीय सत्संग-समारोह में पूज्यश्री ने संदेश दिया कि : **"शांति आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है । मनुष्य यदि आत्मशांति को प्राप्त कर ले तो विश्वशांति भी आ सकती है । आत्मशांति के बिना विश्वशांति के लिए किये गये प्रयास निष्फल ही होते हैं ।"**

संतशिरोमणि पू. बापू ने कहा कि : **''कामना और वासना की दौड़ मनुष्य को प्रेत-पिशाच की तरह भटकाती है । उससे बचना चाहिए । सच्ची शांति पाने के लिए प्रयत्न करना चाहिए और सच्ची शांति अध्यात्म के मार्ग पर चलने से ही मिलेगी, ऋषि-मुनियों के बताये साधन अपनाने से और साधना-उपासना के साथ जीवन में नीति-सदाचार का पालन करने से मिलेगी ।''**

पूज्यश्री के सान्निध्य में छः अप्रैल को विद्यार्थियों के लिए विशेष कार्यक्रम हुआ, जिसमें सुबह के सत्र में हजारों बच्चे विद्यालयी गणवेष पहने सत्संग-पाण्डाल में पहुँचे । पूज्य बापू ने उन्हें आशीर्वाद देते हुए कहा कि : **''तुम भारत की संतान हो यह हमेशा ध्यान रखना और अपनी संस्कृति की महान् परंपराओं का अनुकरण करना ।''** पूज्यश्री ने छात्र-छात्राओं को शरीर सुदृढ़ बनाने एवं स्मरणशक्ति और कार्यकुशलता बढ़ाने के उपाय बताये एवं कुछ नियम दिये, साथ ही यौगिक प्रयोग भी कराये ।

आठ अप्रैल को लाल किला मैदान पर अभूतपूर्व दृश्य था जिसमें लगभग बारह हजार नये साधकों ने मंत्रदीक्षा प्राप्त की । नौ अप्रैल को पूज्यश्री का पचपनवाँ अवतरण-दिवस था । उस दिन पूज्य बापू का दिव्य रूप साधकों को भावविभोर कर रहा था । श्रद्धा-सुमन चढ़ाने आये एक लाख से अधिक लोगों से पाण्डाल खचाखच भरा था । इस शुभ अवसर पर हजारों लोगों ने पान-मसाला, बीड़ी-सिगरेट जैसे दुर्व्यसनों को छोड़ने का संकल्प लिया । पूज्यश्री ने कहा कि :

''जन्मदिन अपने जीवन को सार्थक बनाने के संकल्प की याद दिलाने के लिए है । इस दिन प्रत्येक व्यक्ति को अपने जीवन के उद्देश्य की याद करनी चाहिए ।'' उन्होंने आगे कहा कि : **''पाश्चात्य संस्कृति के अनुसार मोमबत्ती बुझाकर नहीं अपितु भारतीय संस्कृति के अनुसार दीप प्रज्वलित करके जन्मदिन मनाना चाहिए। यह क्रिया अपने जीवन को आलोकित करने की प्रेरणा देती है ।''**

छः दिन चले द्वितीय विश्वशांति सत्संग समारोह में सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्र के कई प्रभावशाली व्यक्ति, भारतीय जनता पार्टी के अध्यक्ष श्री लालकृष्ण आडवाणी, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघ चालक प्रो. राजेन्द्र सिंह (रज्जू भैया), हरियाणा के मुख्यमंत्री भजनलाल और उनके मंत्रीमण्डलीय सहयोगी अमरसिंह माँगेलाल, फूलचन्द मौलाना एवं पूर्व केन्द्रीय मंत्री और कांग्रेस-नेता हरिकिशनलाल भगत पूज्य बापू के दर्शनार्थ आये ।

अपने आतिथ्य उद्‌बोधन में **श्री लालकृष्ण आडवाणीजी ने कहा : ''देश में अगर कोई**

सत्परिवर्तन करना है तो जब तक उसके पीछे आध्यात्मिक शक्तिवाले साधु-संतों का आशीर्वाद नहीं होगा, तब तक वह कार्य नहीं सधेगा । इसलिए आज आपके (पूज्य बापू के) दर्शन करके, आपके प्रेरक वचन सुनकर मैं अपने-आपको धन्य अनुभव करता हूँ और विशेष आभार प्रगट करता हूँ ।''

इस अवसर पर हरियाणा के मुख्यमंत्री श्री भजनलालजी ने कहा कि :

''परम श्रद्धेय बापूजी ! बहुत वर्षों के बाद ऐसे शानदार प्रवचन सुनने का मौका मिला है । मैं इसके लिए अपने-आपको बड़ा ही भाग्यशाली मानता हूँ । पू. बापूजी ने मुझे जो आशीर्वाद दिया है उसके लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं । बस, इतनी बात कहता हूँ कि पू. बापूजी का आशीर्वाद हम सभी पर बना रहे । संसार में ऐसे महापुरुषों की बहुत जरूरत है । मैं ज्यादा कुछ न कहते हुए पू. बापूजी के चरणों में नतमस्तक होकर प्रणाम करता हूँ और परम पिता परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि उनके पवित्र और हितकारी उपदेश हमारे दिलो-दिमाग में पूरी गहराई से उतर जायें और उनके प्रवचनों पर हम सभी अमल करें ।''

जब पूज्य बापू ने पान-मसाले से होती हानि पर सत्संग में प्रकाश डाला तभी हजारों श्रोताओं ने पान मसाले का त्याग करने का संकल्प करते हुए हाथ ऊँचा किया जिसमें हरियाणा के मुख्यमंत्री भजनलाल और उनके साथी भी शामिल थे ।

हजरत निजामुद्दीन औलिया की दरगाह के कव्वाल निजामी बन्धु ने पूज्य बापू के श्रीचरणों में बैठकर उनका गुणगान किया । दिल्ली की दो निजी प्रसारण संस्थाएँ- 'सिटी केबल' और 'इन केबल' ने द्वितीय विश्व शांति सत्संग समारोह के सीधे प्रसारण की व्यवस्था की थी, जिसके जरिये राजधानी के लाखों घरों में पूज्यश्री का सत्संग देखा और सुना गया । जो लोग किन्हीं व्यस्तता या विवशता के कारण लाल किला मैदान नहीं पहुँच पाये उनके लिए ये प्रसारण वरदानस्वरूप थे ।

ब्रह्मलीन सद्‌गुरु संत परम पूज्य सवामी श्री लीलाशाहजी महाराज की प्रतिमा का प्राणप्रतिष्ठा समारोह दिनांक १० अप्रैल को पूज्य बापू के करकमलों से संपन्न हुआ । इस शुभ अवसर पर भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री मदनलाल खुराना व सिन्धी समाज के अन्य गणमान्य व्यक्तियों ने पूज्य बापू का स्वागत किया । श्री मदनलाल खुराना ने इस मौके पर कहा कि : ''जब तक राजनीति के ऊपर धर्म की परंपरा रही तब तक देश का शासन सुचारु रूप से चला । इस देश की परंपरा यह थी कि राजा राजमद में आकर कहीं अनर्थ न कर बैठे, पाप न कर बैठे इसलिए गुरु के रूप में धर्म बैठता था जो राजा को समझाता था और जब तक राजा को यह शिक्षा मिलती रही, तब तक राज्य ठीक चला ।'' उन्होंने आगे कहा कि : ''आज जो भारत देश में धर्म का प्रचार-प्रसार हो रहा है वह ऐसे ही महापुरुषों द्वारा हो रहा है ।''

बाँरा : राजस्थान क्षेत्र की इस भूमि को एक लम्बी प्रतीक्षा के बाद दिनांक १७ से २१ अप्रैल तक पाँच दिवसीय सत्संग-समारोह का लाभ मिला, जिसमें दो दिन आश्रम के साधक सुरेश बापू का एवं तीन दिन तक परम पूज्य बापू के दिव्य अमृतवचनों का लाभ मिला । इस सत्संग समारोह में दूर-दूर के वनांचलों से आये हुए हजारों आदिवासियों व आमजनता ने बड़ी भारी तादाद में पूज्य बापू की अमृतमयी वाणी का रसपान किया । सबसे अधिक आश्चर्य तो यह था कि जब तक पूज्य बापू बाँरा नहीं पहुँचे थे, तब तक भयंकर गर्मी पड़ रही थी लेकिन पूज्य बापू के बाँरा पहुँचने पर सत्संग-समारोह के प्रथम दिन ही आकाश में काले-घने बादल छा गये और हल्की बूँदा-बाँदी हुई जिससे गर्मी और गर्म हवाओं के साथ उड़नेवाली धूल शान्त हो गयी । मौसम बदल गया जिससे पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग में सहयोग मिला एवं सत्संग पाण्डाल में उपस्थित श्रद्धालुगणों के आनंद एवं खुशी में और अभिवृद्धि हुई । कहाँ तो तप्त राजस्थान क्षेत्र में कोटा से ८० किलोमीटर दूर बाँरा जिला और कहाँ अप्रैल माह की तारीख १९ व २० की ठंडी हवाएँ !

इस अवसर पर आमजनता के साथ राजनेताओं व शहर के पदाधिकारियों ने भी पूज्य बापू का सत्संग

(शेष पृष्ठ २८ पर)